महानगर

नरेन्द्रनाथ मित्र

महानगर





सरस्वती विहार

महानगर



संध्या साढ़े पांच और छः के बीच जिसके आने की बात हो, वह यदि रात आठ बजे तक नहीं आए, और वह यदि घर की कम-उम्र 'बहू' हो, तब घर के लोग चिन्तित क्यों नहीं होंगे ? रास्ते में सिर्फ विपद्-आपद् का भय ही नहीं है, मान-सम्मान का भी भय है । आदमी आज वन-जंगल या पहाड़-पर्वत की कंदराओं में नहीं रहता, समाज के पांच लोगों के साथ, मकान-मालिक के साथ, दूसरे अन्य किरायेदारों के साथ, पास-पड़ोसियों के साथ भी उसे रहना होता है। इनमें से कोई भी आंखें मूंदकर या मुंह-कान बन्द रखकर नहीं रहता। आज की दुनिया में कोई वैसा मूर्ख नहीं है। सब सभी बातें समझते हैं। घर की बहू यदि रात आठ बजे तक—यहां तक कि नौ-दस बजे तक भी बाहर ही रहे—लोग क्या सोचेंगे ?

"दूसरे घर की बहू का कोई ऐसा रंग-ढंग देखकर हम लोग ही क्या सोचते ?" प्रियगोपाल सीधे अपने लड़के से पूछते हैं।

सुव्रत ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। पिताजी की यह जिज्ञासा ब्रह्म-जिज्ञासा की तरह है; न इसका आदि है, न अन्त। पत्नी द्वारा नौकरी कर लेने के साथ ही सुव्रत एक विचित्र स्थिति में पड़ गया है। घर के सभी लोगों के सामने—मां-बाप, भाई-बहन—सभी के सामने जैसे वह



संध्या साढ़े पांच और छः के बीच जिसके आने की बात हो, वह यदि रात आठ बजे तक नहीं आए, और वह यदि घर की कम-उम्र 'बहू' हो, तब घर के लोग चिन्तित क्यों नहीं होंगे ? रास्ते में सिर्फ विपद्-आपद् का भय ही नहीं है, मान-सम्मान का भी भय है । आदमी आज वन-जंगल या पहाड़-पर्वत की कंदराओं में नहीं रहता; समाज में पांच लोगों के साथ, मकान-मालिक के साथ, दूसरे अन्य किरायेदारों के साथ, पास-पड़ोसियों के साथ भी उसे रहना होता है। इनमें से कोई भी आंखें मूंद-कर या मुंह-कान बन्द रखकर नहीं रहता। आज की दुनिया में कोई वैसा मूर्ख नहीं है। सब सभी बातें समझते हैं। घर की बहू यदि रात आठ बजे तक—यहां तक कि नौ-दस बजे तक भी बाहर ही रहे—लोग क्या सोचेंगे ?

"दूसरे घर की बहू का कोई ऐसा रंग-ढंग देखकर हम लोग ही क्या सोचते ?" प्रियगोपाल सीधे अपने लड़के से पूछते हैं।

सुव्रत ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। पिताजी की यह जिज्ञासा ब्रह्म-जिज्ञासा की तरह है; न इसका आदि है, न अन्त। पत्नी द्वारा नौकरी कर लेने के साथ ही सुव्रत एक विचित्र स्थिति में पड़ गया है। घर के सभी लोगों के सामने—मां-बाप, भाई-बहन—सभी के सामने जैसे वह

परम अपराधी हो गया है। पत्नी की हर बात, उसके चाल-चलन के लिए मानो सुव्रत ही जिम्मेदार हो, कैफियत देने के लिए मजबूर हो। कैफियत दे या न दे, किसीके सामने सिर ऊंचा रखना मुश्किल हो गया है। जिसकी पत्नी मनमानी करने वाली हो, बेपरवाह हो, पांच लोग उसके विषय में क्या सोचते हैं, इसकी जिसे परवाह न हो—ऐसी पत्नी के पति का सिर अपने-आप झुक जाता है, परिवार के सामने, दूसरे लोगों के सामने भी। यह बात बहुत ही समझाकर सुव्रत ने आरती को बताई है। लेकिन उसने तो जैसे न समझने की कसम खा ली है। अब कोई ठौर-ठिकाना किए बिना गुजारा नहीं। वह पति है और पति द्वारा की गई अच्छे-बुरे की विवेचना आरती को स्वीकार करनी होगी। इस बात को वह नजरअंदाज कैसे कर सकती है?

२

सदर दरवाजे की सांकल हिलने के साथ ही सरोजिनीदेवी के कान खड़े हो गए।

इसके बाद बेटे की ओर देखकर बोलीं, "अब आई हैं हमारी महारानी! रात आठ बजे के बाद घर की लक्ष्मी को घर-द्वार की याद आई! दो दिनों से मुन्ने को बुखार है, इस ओर जैसे ध्यान ही नहीं! जाऊं, दरवाजा खोल दूं।"

सरोजिनीदेवी उठ खड़ी हुई।

सुव्रत चौकी पर बैठा अब तक पत्नी के विरुद्ध अभियोग सुन रहा था। सरोजिनीदेवी को रोकते हुए बोला, "मां, तुम बैठो, मैं ही जाता हूं।"

पास ही दीवार से सटे, बीमार पोते के पास बैठे प्रियगोपाल ने टिप्पणी की, "इतनी रात गए तक किसी भले घर की बहू बाहर नहीं रहती। ऐसा ही होगा, यह मैं पहले से जानता था। अस्तबल के घोड़े और घर की बहू की लगाम यदि ढीली हो जाए···"

सरोजिनीदेवी ने बात काटी, "रहने दो, रहने दो! तुम लोगों में से किसमें कितनी हिम्मत है, यह मैं जानती हूं।"

इसके बाद बेटे की ओर देखकर बोली, "जाते हो तो जाओ, लेकिन खबरदार भोम्बल, बहू से झगड़ा-झंझट मत करना। हाय-तोबा मचाने की जरूरत नहीं। जो कहना हो, शान्ति से बाद में कहना।"

सुव्रत बिना कुछ बोले सदर दरवाजे की ओर बढ़ गया।

दरवाजा खुलते ही घर में घुसते आरती बोली, "कब से साकल खटखटा रही थी! मनोहर बाबू भी अजीब हैं। शाम होते न होते सदर दरवाजा बन्द कर देते हैं। इसके बाद दरवाजा तोड़ना भी पड़े, लेकिन कोई खोलने नहीं आएगा!"

सदर दरवाजे में रोशनी का इन्तजाम नहीं है। दरवाजा खुलते ही गली-मोड़ पर से गैस की हल्की रोशनी आई। उसी रोशनी में आरती का चेहरा साफ दिखाई पड़ा। लम्बी, दोहरे बदन की। इन कुछ महीनों में आरती जैसे कुछ इंच और लम्बी हो गई है—या हाई हील पहनने के कारण ऐसा लग रहा है। बायें हाथ में वैनिटी-बैग। दायें हाथ में ग्लूकोज का एक डिब्बा और एक डोंगा। सिर पर आंचल नहीं है।

सुव्रत बोला, "शाम हुए दो घंटे से ऊपर वक्त हो गया, अब तक कहां थी?"

पति के बोलने के ढंग पर आरती मुस्कराई। बोली, "लेक की तरफ घूम रही थी।"

सुव्रत ने जोर से दरवाजा बन्द कर दिया।

आरती बोली, "अरे चले कहां ? रुको, मेरे हाथ का सामान तो पकड़ो।"

सुव्रत ने पूछा, "क्यों ?"

आरती बोली, "ओहो, पकड़ो न ! इससे घट नहीं जाओगे। सिर का आंचल तो ठीक कर लूं, सास-ससुर भीतर जो हैं।"

सुव्रत बोला, "रास्ते भर जब बिना सिर पर आंचल किए आ सकीं, तो घर में यह लाज न दिखाने से भी चलेगा।" यह कहकर दनदनाता हुआ सुव्रत भीतर चला गया।

कुछ ही क्षणों बाद आरती घर में घुसी। देखा गया, इस संबंध में सुव्रत द्वारा सहारा न मिलने पर भी उसने सिर का आंचल खींच लिया है।

"मुन्ना कैसा है ?" सामान रखते हुए आरती ने पूछा।

पहले तो कोई उत्तर नहीं आया। फिर थोड़ी देर बाद सुव्रत बोला, "इसकी खोज-खबर लेने की तुम्हें जरूरत ही क्या है ?"

आरती पति की बात का उत्तर दिए बिना सोए हुए लड़के की ओर बढ़ गई और उसके सिर पर हाथ धरकर बोली, "बुखार अब बहुत कम है।"

पास के कमरे में सुव्रत के छोटे भाई-बहन अपने-अपने सबक याद कर रहे थे। आरती के आने की आहट पाकर वे दौड़े आए—नीला, नन्तू और सन्तू।

सन्तू का आग्रह सबसे अधिक है, "सन्तरे लाई हैं भाभी ?"

आरती उनकी ओर देख मुस्कराई, "लाई हूं।"

प्रियगोपाल ने डांटते हुए कहा, "जाओ, पढ़ो जाकर। रोज-रोज इन्हें

सन्तरे चाहिए !"

आरती श्वसुर की ओर देख बोली, "आज सन्तरे कुछ सस्ते ही मिल गए, बावूजी ! कल आप रुपये मे आठ लाए थे, आज उनसे कहीं बड़े सन्तरे मैं रुपये के दस लाई हूं। आपको ठग लिया था।"

प्रियगोपाल बोले, "बूढे आदमी को सभी ठगते हैं बेटी ! जो सामान खरीदना हो, दिन मे खरीदो। खरीदारी के लिए इतनी रात करना क्या ठीक है ?"

आरती ने इस बार गंभीर स्वर मे उत्तर दिया, "खरीदारी मे रात नही हुई, बावूजी ! आफिस मे काम अधिक होने के कारण रुक जाना पड़ा। इसके अलावा ट्राम के झंझट से भी देर हो गई।"

सरोजिनीदेवी इतनी देर बाद बोली, "मुन्ने को क्या चुप रखा जा सकता है ! सारा दिन वह 'मा-मा' की रट लगाता रहता है।"

आरती ने सास की बात का कोई उत्तर नही दिया। पास की अलगनी मे साड़ी उतारकर दूसरे कमरे मे घुस गई।

सुव्रत भी पीछे-पीछे आया, "रुको, बात सुनो।"

आरती ने दरवाजे का पल्ला लगाते हुए कहा, "ठहरो, जरा साड़ी तो बदल लू।"

सुव्रत ने रूखे स्वर मे कहा, "साड़ी बाद मे बदलना। पहले यह बताओ कि मेरे मना करने पर भी आज आफिस क्यो गई ?"

आरती ने कमरे के भीतर से ही जवाब दिया, "नही जाने पर कैसे चलता ? मुन्ने की बीमारी को लेकर ही ऐसा कह रहे हो न ? मुन्ने के साधारण बुखार या पेट-दर्द के होते क्या तुम आफिस जाना बन्द करते हो ? फिर तुम्हारे बच्चे को मैं अकेला तो छोड़ नही गई। ऐसी बात भी नही कि उसकी देखभाल करने के लिए घर मे लोग नही है।"

सुव्रत कुछ क्षणो तक चुप रहकर बोला, "मैं तुम्हारे आफिस जाने

के विरुद्ध नहीं हूं। लेकिन आफिस के कारण तुम्हें रात आठ बजे तक बाहर रहना पड़े, घर के और लोगों की सुख-सुविधा का ध्यान न रहे, यहां तक कि बीमार की तीमारदारी भी न हो—इस तरह आफिस की नौकरी मैं तुम्हें हरगिज नहीं करने दूंगा।"

आरती बोली, "रोज तो देर नहीं होती। फिर नौकरी न करने से काम कैसे चलेगा?"

सुब्रत बोला, "काम कैसे चलेगा, यह मैं समझूंगा। इतने दिन तुमने नौकरी नहीं की तो क्या घर चलता नहीं था? और फिर जब मुझे एक अच्छी पार्ट-टाइम नौकरी भी मिल गई है तब इतनी तकलीफ करने की तुम्हें जरूरत ही क्या है?" अन्तिम वाक्य सुब्रत ने जाने क्यों बहुत ही सहानुभूति के स्वर में कहा।

३

सोते समय यह चर्चा फिर उठी। खाना-पीना खत्म कर मुंह में पान भर जब सोने के लिए आरती आई, तब सुब्रत लेटे-लेटे एक किताब के पन्ने उलट रहा था। किताब बन्द कर उसने इधर-उधर की कुछ चर्चा की और फिर पत्नी से बोला, "कल एक इस्तीफा लिखकर दे देना, समझीं?"

आरती ने इस बार कुछ झुंझलाहट-भरे स्वर में कहा, "मेरी नौकरी को लेकर तुम्हारे मन में इतनी बेचैनी क्यों है?"

सुव्रत स्थिर दृष्टि से कुछ क्षणों तक पत्नी की ओर देखता रहा; इसके बाद शान्त स्वर में बोला, "आजकल तुम्हारे बोलने-चालने का ढंग बदला हुआ है।"

आरती लजाकर हंस पड़ी, "सच में, मिजाज हमेशा ठीक नहीं रहता। आज कितनी दौड़-धूप करनी पड़ी, इसका तो तुम्हें पता नहीं। टालीगंज के आखिरी छोर तक जाना पड़ा था। इसीलिए देर हुई। देरी हुई, लेकिन काम बन गया। इन्दिरा के घर वाले एक महीने लेंगे। नगद बारह रुपये का रोजगार हो गया।"

आरती ने सोचा था—पिछले दिनों की तरह सुव्रत इस बात पर प्रसन्नता व्यक्त करेगा। लेकिन उसकी बातों से ऐसे कोई लक्षण नहीं मिले।

सुव्रत ने उसी तरह शुष्क और गंभीर स्वर में कहा, "रात आठ बजे तक जहां-तहां घूमने की जरूरत नहीं—रुपया कमाने की भी जरूरत नहीं।"

आरती बोली, "रुपये आते हैं तो उन्हें फेंका तो नहीं जा सकता। वे घर-गृहस्थी के काम आते हैं।"

सुव्रत ने जवाब दिया, "लेकिन रुपये से भी बड़ी चीज है प्रेस्टिज, बड़ी चीज है घर की सुख-शान्ति। और फिर मैं नहीं चाहता कि मेरी पत्नी रुपये-आने-पैसे की थैली भर रह जाए।"

आरती किंचित् मुस्कराई, "तुम इन दिनों ठीक बाबूजी की तरह बोलना सीख गए हो।"

बाबूजी माने—प्रियगोपाल, सुव्रत के पिता।

सुव्रत अपनी पत्नी की ओर देखकर बोला, "हां, वैसा ही बोल रहा हूं। बोलने की जरूरत आ पड़ी, तभी बोल रहा हूं। एक समय, अपनी गृहस्थी की जरूरत को ध्यान में रखकर मैंने तुम्हें नौकरी करने के लिए कहा था। आज उसी बात को ध्यान में रखकर तुम्हें नौकरी छोड़ देने के लिए कह रहा हूं। नौकरी तुम्हें छोड़नी होगी।"

"अच्छी बात है।"

यह कहकर आरती ने करवट बदल ली और इसके बाद चुप हो गई।

लेकिन यह 'मौन' सहमति का लक्षण नहीं था, इसे समझने में सुव्रत को देर नहीं हुई।

आश्चर्य है, दिन-ब-दिन आरती की जिद बढ़ती जा रही है। रुपये का लोभ सीमा पार कर गया है। सुव्रत ऐसी बात को प्रश्रय नहीं दे सकता। आरती द्वारा रात-दिन रुपये कमाने की कोशिश सुव्रत को बहुत 'स्थूल' लगती है। लगता है, मानो आरती की सारी सुकुमार-वृत्ति हर रोज रुपयों की राशि के नीचे धंसती जा रही है।

लगभग छः महीने पहले सुव्रत ने ही नौकरी की आवश्यकता पर बल दिया था। उसे बैंक से जो वेतन मिलता है, वह महीने के पन्द्रह दिन बीतते न बीतते खत्म हो जाता है। ट्यूशन के पैसे समय पर नहीं मिलते। परिणाम यह होता है कि दो सप्ताह का राशन और घर-खर्च चलाते सुव्रत का दम घुटने लगता है।

परिवार में कमाने वाला सिर्फ वही है, उसकी कमाई पर निर्भर रहने वाले कई हैं। स्वयं पति-पत्नी और छोटा मुन्ना। इनके अलावा बूढ़े मां-बाप और तीन छोटे भाई-बहन। दोनों भाइयों को स्कूल भेजना पड़ता है। उल्टाडांगा की लम्बी-पतली गली में एकतल्ला मकान के दो छोटे कमरे। इसी घर का भाड़ा पैंतालिस रुपये भरने पड़ते हैं। घर-गृहस्थी के खर्च के अलावा बीमारी-तीमारी का खर्च अलग है। दुनियादारी का भी ध्यान रखना पड़ता है। परिणाम यह होता है कि हर महीने, जमा रकम से खर्च कहीं भारी पड़ता है।

उधार लेने की चेष्टा में एक दिन अपने एक दोस्त के घर से सुव्रत को खाली हाथ लौटना पड़ा। आरती ने पति का चेहरा देखकर ही सब

समझ लिया था।

'शायद भेंट नहीं हुई ?'

सुव्रत ने बैठे स्वर में कहा, 'भेंट क्यों नहीं होती ? परिमल ने दुःख प्रकट करते हुए कहा कि उसके हाथ तंग हैं। बोला, हम दोनों कमाते हैं, फिर भी घर का खर्च पूरा नहीं होता।'

बात आरती को खटकी। पूछा, 'हम दोनों का मतलब ?'

सुव्रत बोला, 'हम दोनों का मतलब—माधुरी भी इन दिनों नौकरी कर रही है। नौकरी यानी मास्टरी। लड़कियों के किसी स्कूल में अध्यापिका है। सब तो हमारी तरह नहीं हैं।'

आरती चुप रह गई। बात देर तक चुभती रही मन में।

परिमल बाबू की स्त्री माधुरी ने भी नौकरी कर ली है! इसके पहले भी अपने दोस्तों की पत्नियों द्वारा नौकरी कर लेने की खबरें सुनाता था सुव्रत! कोई अध्यापिका, कोई किरानी।

कुछ देर बाद सुव्रत ने फिर कहा, 'पुरुष हो या स्त्री—आजकल घर बैठकर कोई खा सकता है ? यदि कोशिश करके तुम भी कोई नौकरी-वौकरी कर लो तो बुरा नहीं। बीस हो, पचीस हो, जो लाओगी, उससे हमारी बहुत कुछ मदद हो जाएगी।'

आरती ने चकित होकर कहा, 'मैं ? मुझे नौकरी कौन देगा ? और यदि नौकरी मिले भी तो क्या तुम लोग मुझे करने दोगे ?'

सुव्रत ने जवाब दिया, 'यदि नौकरी कर लो, तब क्या कोई रोके रख सकता है ?'

इतने दिनों से आरती घर का खर्च कम करने की चेष्टा करती रही है। जमा-खर्च की कापी लेकर छान-बीन कर यह देखती रही है कि खर्च कहां कम किया जा सकता है। पति से सलाह कर सप्ताह में तीन दिन निरामिष भोजन की व्यवस्था हुई है; घर के अधिकांश कपड़े स्वयं

धोकर धोबी के खर्च में कटौती की है; कोयले का खर्च बचाने के लिए सुबह-दोपहर कोयले के चूरे से गोले बनाने बैठी है !

हर महीने सोचा है, अगले महीने घर का खर्च कम होगा। लेकिन ठीक उसी महीने या तो श्वसुर का कुरता फटकर जर्जर हो गया है, या साड़ी धोते समय सास की साड़ी फटकर तार-तार हो गई है, या नहीं तो मुन्ना गंभीर रूप से बीमार पड़ गया है, या पास के सिनेमा हॉल में किसी प्रसिद्ध कहानी की तस्वीर लगी है। लुक-छिपकर अकेले तो नहीं देखा जा सकता। परिवार में सबके साध-अरमान हैं।

इस बार उसके मन में आया, सिर्फ खर्च कम करना ही नहीं है, आमदनी को बढ़ाने की दिशा में भी सचेत होना है।

वह बिलकुल कोरी है, ऐसी बात भी नहीं। विवाह के पहले मैट्रिक पास किया था। एकाध साल कालेज में भी पढ़ती रही थी। इसके बाद विवाह हो गया। ससुराल गांव में थी। वहां स्कूल-कालेज नहीं था। उसके पिता ने कहा था, 'अच्छी बात है, यदि आगे पढ़ना चाहती है तब एक साल यहीं रहकर परीक्षा दे दो। चिन्ता मत करो, पढ़ाई का खर्च तुम्हारे श्वसुर से नहीं मांगूंगा।'

किन्तु प्रियगोपाल राजी नहीं हुए थे। आरती के पिता को मजाक में लिखा था, 'विवाहिता कन्या को जितना पढ़ाया-लिखाया है, पहले उसी-को देख लें कि हम हजम कर सकते हैं या नहीं, इसके बाद न होगा तब स्कूल-कालेज भेजेंगे।'

उसी दिन उन्होंने पुत्रवधू को पूजा-घर से लेकर गाय बांधने का स्थान दिखाकर कहा था, 'अब सारा भार तुमपर है, बेटी ! स्कूल हो या कालेज, घर-गृहस्थी के विश्वविद्यालय से बड़ा कोई नहीं है। यहां अपने हाथ से जो कुछ सीखेगी, दस विश्वविद्यालय भी उतना तुम्हें नहीं सिखा पाएंगे।'

इसके दो साल बीतते न बीतते प्रियगोपाल की जमींदारी सिरिश्ता की नौकरी खत्म हो गई। खर्च की तंगी के कारण घर की गाय बेच देनी पड़ी। पूजा-मंडप के धूप-दीप-नैवेद्य—सभीमें कटौती होती गई। इसके बाद हुआ—भारत-पाकिस्तान बंटवारे का हंगमा। पड़ोसियों की देखा-देखी प्रियगोपाल ने पहले बड़े आदि को सुबल के पास कलकत्ता भेज दिया।

किन्तु कलकत्ता में लड़के ने लिखा, 'दो जगहों का खर्च हम नहीं चला पाएंगे। मां को लेकर आप भी चले आइए।'

चल-अचल थोड़ी-सी सम्पत्तिमें से कुछ छोड़कर, कुछ जाति-बिरादरी की देख-रेख में सौंपकर एक दिन प्रियगोपाल अपनी पत्नी के साथ कलकत्ता आ गए।

सोचा था—दो-एक महीने रहकर, हालत सुधरने पर वापस चले जाएंगे। लेकिन अब जाते हैं, तब जाते हैं—करते हुए भी जाना नहीं हो सका। आज खुद बीमार हैं, कल पोते की तबीयत खराब है। इसके अलावा अनेक अभाव, हाय-हाय के रहते हुए भी शहर में रहने का एक अनोखा सुख है।

जवानी के सभी संगी-साथी, हितू-कुटुम्बी कलकत्ता आ गए हैं। अगर जेब में किसी तरह चार पैसे आ जाए, तब शहर एक छोर से दूसरा छोर तक देखा जा सकता है। पुराने साथियों, नाते-रिश्तेदारों से भेंट-मुलाकात हो सकती है। किसी चाय की दुकान में या राशन की लाइन में खड़े होकर उनसे बातें करना बुरा नहीं लगता।

फिर भी बीच-बीच में प्रियगोपाल बाबू अपना क्षोभ प्रकट करते हैं, 'यह शहर नहीं, सप्तरथियों का चक्रव्यूह है। यहां सिर्फ आने का रास्ता है, निकलने का कोई नहीं।'

आरती कहती, 'निकलेंगे क्यों बाबूजी? हम लोगों के पास

रहिए।'

इसके बाद से ही आरती ने दैनिक समाचारपत्र में 'जगह खाली है' विज्ञापन पृष्ठ पर नजर दौड़ानी शुरू की और वह लिफाफे पर 'पोस्ट बाक्स' का नम्बर लिखकर आवेदन-पत्र भेजने लगी।

सुव्रत ही आवेदन-पत्र लिख देता था। अपने आफिस से स्वयं टाइप कर ले आता था। आरती सिर्फ अपने सुन्दर हाथ से हस्ताक्षर भर करती थी। बीच-बीच में ऐसा करते रहना उसे अच्छा लगता था, मानो कोई नवीन रोमांस हो, बिलकुल नये ढंग का तरुण उत्साह!

किन्तु निशाना केवल चूकता ही रहा, लगा नहीं। दो-एक स्कूलों से इंटरव्यू के लिए बुलावा आया। इंटरव्यू के बाद सुनने में आता—वह जगह किसी ग्रेजुएट को दे दी गई।

अन्त में कैनिंग स्ट्रीट के 'मुखर्जी एण्ड मुखर्जी' फर्म से इंटरव्यू का पत्र आया। इस फर्म ने कुछ दिन पहले 'डिमांस्ट्रेटर' पद के लिए भद्र घर की लड़कियों से आवेदन-पत्र आमंत्रित किए थे। शुरू में एक सौ रुपया वेतन, भविष्य में उन्नति की आशा।

सुव्रत ने एक बार कहा, 'किन्तु…'

आरती के मन में भी द्विविधा नहीं थी, ऐसी बात नहीं। अध्यापकी जैसी संभ्रान्त नौकरी नहीं है। अपने परिचितों के बीच क्या ऐसी नौकरी की चर्चा की जा सकती है?

लेकिन वेतन जो एक सौ रुपये है, आरती के मन में बात फिर उभरी।

इधर सुव्रत को अपने ट्यूशन के पैसे ठीक से नहीं मिल रहे थे। विद्यार्थी फिर फेल हो गया था। लगता था, पिछले महीने के रुपये मारे जाएंगे।

कुछ क्षणों तक चुप रहने के बाद सुव्रत बोला, 'आजकल नौकरी चुनने का कोई मतलब नहीं होता। जाने कितने लोग कैसी-कैसी नौकरियां

करते हैं !'

आरती म्लान भाव से मुस्कराई, 'मैं तो नौकरी चुनने की बात नहीं कर रही हूं। लेकिन जो चुनाव करेंगे, वे तो चुनकर ही लेंगे। वे क्या मुझे पसन्द करेंगे ? इंटरव्यू में मैं क्या सफल हो पाऊंगी ?'

सुव्रत बोला, 'यह मैं कैसे कह सकता हूं ? लेकिन मैं यदि चुनाव-बोर्ड में होता, एक नजर में ही तुम्हें चुन लेता !'

आरती मुस्कराई, 'हूं ! गलत बात। तुम सबसे पहले मुझे रिजेक्ट कर देते। बंकिमचन्द्र के समय बंगाली पति को अपनी पत्नी का चेहरा ही सबसे सुन्दर लगता था। लेकिन इधर उनकी दृष्टि बदल गई है !'

४

बीमार सास को देखने के बहाने सुव्रत ही आफिस जाने के समय पत्नी को लेकर कैनिंग स्ट्रीट गया।

चारतल्ला बिल्डिंग के दोतल्ले पर 'मुखर्जी एण्ड मुखर्जी' कम्पनी का साइनबोर्ड टंगा हुआ है। कारीडोर में लड़कियों की भीड़ है।

सुव्रत नीचे से ही बोला, 'जाओ, भीड़ में घुस जाओ।'

आरती ने पूछा, 'तुम साथ नहीं रहोगे ?'

सुव्रत ने जवाब दिया, 'इंटरव्यू तुम्हारा हो और मैं बेवकूफ की तरह खड़ा रहूं ! इतना घबरा क्यों रही हो ? डर किस बात का है ?

इतनी सारी लड़कियां भी तो आई हैं। इनमें से कितनी अपने पति को लेकर आई हैं ?'

अनेक लड़कियों के 'पति' नहीं होंगे। सुव्रत ने तिरछी दृष्टि से इंटरव्यू में आई लड़कियों को देखा। अधिकतर लड़कियां 'कुमारी' हैं।

फिर वह बोला, 'इसके अलावा आफिस में मुझे आज कुछ जरूरी काम निपटाने हैं। देरी करने से काम नहीं चलेगा।'

आरती अपने पति के और पास आकर बोली, 'ये लोग क्या पूछेंगे, जरा बतलाओ न ? डर लग रहा है—पता नहीं, जवाब दे पाऊंगी या नहीं !'

सुव्रत ने पत्नी का साहस बढ़ाया, 'क्यों नहीं जवाब दोगी ? सामान बेचने के लिए कोई बहुत पढ़ी-लिखी लड़कियां तो नहीं चाहिए। वे सिर्फ यह देखेंगे कि उम्मीदवार तेज और चतुर है या नहीं। इसके अलावा फर्म ने अपने विज्ञापन में जिस सिलाई-बिलाई की योग्यता के विषय में लिखा था, वह सब तो तुम्हारे पास है—फिर डर किस बात का ?'

सुव्रत ने जाते-जाते घूमकर एक बार फिर अपनी पत्नी की ओर देखा।

आरती का चेहरा देखकर लगा, वह कुछ घबरा गई है। थोड़ी ममता भी हुई।

उसे अपने पहले इंटरव्यू की याद आई। उस समय क्या सुव्रत नहीं घबराया था ? अपनी घड़ी की ओर उसने देखा। यदि समय होता और आफिस में जरूरी काम निपटाने नहीं होते, तब वह आरती के पास ही ठहर सकता था।

आफिस से लौटने पर चाय का प्याला थमाते समय आरती ने पति को सुखद समाचार सुनाया। लड़कियां कुल तेईस थीं। उनमें से दो ग्रेजुएट भी थीं। 'मुखर्जी एण्ड मुखर्जी' ने चार लड़कियों का चुनाव किया है। आरती उन चारों में प्रथम है।

सुव्रत चाय की चुस्की लेता बोला, 'यह तुमने कैसे समझ लिया कि तुम चुन ली गई हो ? असफल उम्मीदवारों में तुम नहीं हो ?'

आरती मुस्कराई, 'इसे समझने में क्या देर लगती ? इसके अलावा सीनियर मुखर्जी साहब ने तो आते समय स्पष्ट संकेत दे दिया, हमारे परिवार में कौन-कौन हैं, बच्चे को छोड़कर आ सकती हो या नहीं, परिवार के लोगों को तुम्हारी इस नौकरी में एतराज तो नहीं होगा ? सब छोटी-मोटी बातें पूछकर उन्होंने कह दिया, उन्हें हम पसन्द हैं। दो-तीन दिनों के भीतर नियुक्ति-पत्र मिल जाएगा।'

५

नियुक्ति-पत्र सचमुच आ गया—आरती मजूमदार के नाम अंग्रेजी में लिखी चिट्ठी।

'मुखर्जी एण्ड मुखर्जी' कम्पनी को उसे अस्थायी रूप में आफिस असिस्टैंट के रूप में बहाल करते प्रसन्नता हो रही है। कार्य-कुशलता देखकर तीन महीने बाद स्थायी किया जा सकेगा।

सुव्रत ने पूछा, 'काम क्या है ?'

'काम कुछ वैसा मुश्किल नहीं है। स्टेशनरी स्टोर्स के अलावा बम्बई से 'ऊन बुनने की एक नई मशीन' की एजेन्सी ली है मुखर्जी कम्पनी ने। इस मशीन से जाड़े के दिनों में स्वेटर और जम्पर तैयार किए जा सकते

इतनी सारी लड़कियां भी तो आई हैं। इनमें से कितनी अपने पति को लेकर आई हैं ?'

अनेक लड़कियों के 'पति' नहीं होंगे। सुव्रत ने तिरछी दृष्टि से इंटरव्यू में आई लड़कियों को देखा। अधिकतर लड़कियां 'कुमारी' हैं।

फिर वह बोला, 'इसके अलावा आफिस में मुझे आज कुछ जरूरी काम निपटाने हैं। देरी करने से काम नहीं चलेगा।'

आरती अपने पति के और पास आकर बोली, 'ये लोग क्या पूछेंगे, जरा बतलाओ न ? डर लग रहा है—पता नहीं, जवाब दे पाऊंगी या नहीं !'

सुव्रत ने पत्नी का साहस बढ़ाया, 'क्यों नहीं जवाब दोगी ? सामान बेचने के लिए कोई बहुत पढ़ी-लिखी लड़कियां तो नहीं चाहिए। वे सिर्फ यह देखेंगे कि उम्मीदवार तेज और चतुर है या नहीं। इसके अलावा फर्म ने अपने विज्ञापन में जिस सिलाई-बिलाई की योग्यता के विषय में लिखा था, वह सब तो तुम्हारे पास है—फिर डर किस बात का ?'

सुव्रत ने जाते-जाते घूमकर एक बार फिर अपनी पत्नी की ओर देखा।

आरती का चेहरा देखकर लगा, वह कुछ घबरा गई है। थोड़ी ममता भी हुई।

उसे अपने पहले इंटरव्यू की याद आई। उस समय क्या सुव्रत नहीं घबराया था ? अपनी घड़ी की ओर उसने देखा। यदि समय होता और आफिस में जरूरी काम निपटाने नहीं होते, तब वह आरती के पास ही ठहर सकता था।

आफिस से लौटने पर चाय का प्याला थमाते समय आरती ने पति को सुखद समाचार सुनाया। लड़कियां कुल तेईस थीं। उनमें से दो ग्रेजुएट भी थीं। 'मुखर्जी एण्ड मुखर्जी' ने चार लड़कियों का चुनाव किया है। आरती उन चारों में प्रथम है।

अन्त मे सुव्रत को ही कहना पडा ।

प्रियगोपाल की गुडगुड़ी बन्द हो गई । कुछ देर तक वे स्तब्ध बैठे रहे; इसके बाद बोले, 'ऐसी बात तुम्हारी जुबान पर आई कैसे भोम्बल ? मेरे जिन्दा रहते मजूमदार घराने की बहू नौकरी करेगी ? और मैं आंखें बन्द कर देखता रहूंगा ?'

सरोजिनीदेवी बोलीं, तुम लोग भीतर ही भीतर खिचड़ी पका रहे थे, इसकी भनक मुझे मिल गई थी । हां, कर ले बहू नौकरी ! लेकिन फिर मैं यहां नही रहूंगी । फिर मुझे पाटलडांगा भेज दो ।'

पाटलडांगा मे सरोजिनीदेवी के बड़े भाई रहते हैं । अपने उन दोस्तों की सूची सुव्रत ने दी, जिनकी पत्निया नौकरी करती हैं ।

किन्तु प्रियगोपाल टस से मस नही हुए । उन्होंने कहा, 'जो करती है, वे करें । हम लोगो के खानदान मे ऐसा कभी नही हुआ और न कभी होगा ।'

सुव्रत भी अपने इरादे मे कम नहीं ।

सबसे पहले उसने पिता के साथ तर्क किया । इसके बाद बोला, 'ठीक है, तब आप ही बतलाइए, घर का खर्च कैसे चलेगा ? मैं शक्तिभर काम करता हूं । एक मिनट भी बैठा नही रहता । किन्तु एक आदमी की नौकरी से इतना बड़ा परिवार चलाना किसीके भी बूते के बाहर है ।'

उत्तर मे प्रियगोपाल कुछ कहने जा रहे थे कि हठात् लड़के के चेहरे की ओर देखकर रुक गए । हथौडे की चोट-सी लगी बेटे की बात—इतना बडा परिवार !

भोम्बल के परिवार को उन्होंने ही बडा किया है । पति-पत्नी और एक छोटा बच्चा । तीन लड़के, लड़किया । क्या इसी बात की खरोंच दे

हैं। गर्मी के दिनों में औरतों-बच्चों के लिए कई प्रकार की पोशाकें तैयार की जा सकती हैं। सबसे पहले हमें इस मशीन के इस्तेमाल का तरीका सीखना होगा—कम्पनी की एक मेम साहब द्वारा। इसके बाद घर-घर जाकर हमें खरीदारों को इसके प्रयोग का तरीका सिखलाना होगा। ढाई सौ रुपये की यह मशीन है। विशेष रूप से यह शौक की एक चीज है। सम्पन्न और धनी घरों को छोड़ और कोई शायद ही इसे खरीदे। 'मुखर्जी एण्ड मुखर्जी' ऐसी लड़कियां चाहते हैं जो स्वयं निम्न मध्यवर्ग की होकर भी ऊंचे और आभिजात घरों की महिलाओं के साथ ढंग से बातचीत कर सकें, जिनका चेहरा आंखों को अरुचिकर न लगे। लड़की ऐसी हो जिसका आचार-व्यवहार, बातचीत करने का ढंग मन को प्रसन्न कर सके।'

आरती इस परीक्षा में उत्तीर्ण हुई है। इसके बाद बात को सास-श्वसुर से छिपाया नहीं जा सका।

सुव्रत ने पत्नी से कहा, 'तुम्हीं बाबूजी से बात करो। तुम्हें वे ज्यादा मानते हैं।'

आरती बोली, 'और तुम्हें क्या कम मानते हैं? नौकरी की बात उनसे मैं कभी नहीं कह पाऊंगी।'

६

अन्त में सुव्रत को ही कहना पड़ा।

प्रियगोपाल की गुड़गुड़ी बन्द हो गई। कुछ देर तक वे स्तब्ध बैठे रहे; इसके बाद बोले, 'ऐसी बात तुम्हारी जुबान पर आई कैसे भोम्बल ? मेरे जिन्दा रहते मजूमदार घराने की बहू नौकरी करेगी ? और मैं आंखें बन्द कर देखता रहूंगा ?'

सरोजिनीदेवी बोलीं, तुम लोग भीतर ही भीतर खिचड़ी पका रहे थे, इसकी भनक मुझे मिल गई थी। हां, कर ले बहू नौकरी ! लेकिन फिर मैं यहां नहीं रहूंगी। फिर मुझे पाटलडांगा भेज दो।'

पाटलडांगा में सरोजिनीदेवी के बड़े भाई रहते हैं। अपने उन दोस्तों की सूची सुव्रत ने दी, जिनकी पत्नियां नौकरी करती हैं।

किन्तु प्रियगोपाल टस से मस नहीं हुए। उन्होंने कहा, 'जो करती हैं, वे करें। हम लोगों के खानदान में ऐसा कभी नहीं हुआ और न कभी होगा।'

सुव्रत भी अपने इरादे से कम नहीं।

सबसे पहले उसने पिता के साथ तर्क किया। इसके बाद बोला, 'ठीक है, तब आप ही बतलाइए, घर का खर्च कैसे चलेगा ? मैं दिनभर काम करता हूं। एक मिनट भी बैठा नहीं रहता। किन्तु एक आदमी की नौकरी से इतना बड़ा परिवार चलाना किसीके भी बूते के बाहर है।'

उत्तर में प्रियगोपाल कुछ कहने जा रहे थे कि हठात् लड़के के चेहरे की ओर देखकर रुक गए। हथौड़े की चोट-सी लगी बेटे की बात—इतना बड़ा परिवार !

भोम्बल के परिवार को उन्होंने ही बड़ा किया है। पति-पत्नी और एक छोटा बच्चा। तीन लड़के, लड़कियां। क्या इसी बात की खरोंच दे

हैं। गर्मी के दिनों में औरतों-बच्चों के लिए कई प्रकार की पोशाकें तैयार की जा सकती हैं। सबसे पहले हमें इस मशीन के इस्तेमाल का तरीका सीखना होगा—कम्पनी की एक मेम साहब द्वारा। इसके बाद घर-घर जाकर हमें खरीदारों को इसके प्रयोग का तरीका सिखलाना होगा। ढाई सौ रुपये की यह मशीन है। विशेष रूप से यह शौक की एक चीज है। सम्पन्न और धनी घरों को छोड़ और कोई शायद ही इसे खरीदे। 'मुखर्जी एण्ड मुखर्जी' ऐसी लड़कियां चाहते हैं जो स्वयं निम्न मध्यवर्ग की होकर भी ऊंचे और आभिजात घरों की महिलाओं के साथ ढंग से बातचीत कर सकें, जिनका चेहरा आंखों को अरुचिकर न लगे। लड़की ऐसी हो जिसका आचार-व्यवहार, बातचीत करने का ढंग मन को प्रसन्न कर सके।'

आरती इस परीक्षा में उत्तीर्ण हुई है। इसके बाद बात को सास-श्वसुर से छिपाया नहीं जा सका।

सुब्रत ने पत्नी से कहा, 'तुम्हीं बाबूजी से बात करो। तुम्हें वे ज्यादा मानते हैं।'

आरती बोली, 'और तुम्हें क्या कम मानते हैं? नौकरी की बात मैं कभी नहीं कह पाऊंगी।'

अन्त मे सुव्रत को ही कहना पड़ा।

प्रियगोपाल की गुड़गुड़ी बन्द हो गई। कुछ देर तक वे स्तब्ध बैठे रहे; इसके बाद बोले, 'ऐसी बात तुम्हारी जुबान पर आई कैसे भोम्बल ? मेरे जिन्दा रहते मजूमदार घराने की बहू नौकरी करेगी ? और मैं आंखें बन्द कर देखता रहूंगा ?'

सरोजिनीदेवी बोलीं, तुम लोग भीतर ही भीतर खिचड़ी पका रहे थे, इसकी भनक मुझे मिल गई थी। हां, कर ले बहू नौकरी ! लेकिन फिर मैं यहां नही रहूंगी। फिर मुझे पाटलडांगा भेज दो।'

पाटलडांगा मे सरोजिनीदेवी के बड़े भाई रहते हैं। अपने उन दोस्तों की सूची सुव्रत ने दी, जिनकी पत्निया नौकरी करती है।

किन्तु प्रियगोपाल टस मे मस नही हुए। उन्होंने कहा, 'जो करती है, वे करें। हम लोगो के खानदान मे ऐसा कभी नही हुआ और न कभी होगा।'

सुव्रत भी अपने इरादे मे कम नहीं।

सबसे पहले उसने पिता के साथ तर्क किया। इसके बाद बोला, 'ठीक है, तब आप ही बतलाइए, घर का खर्च कैसे चलेगा ? मैं शक्तिभर काम करता हूं। एक मिनट भी बैठा नही रहता। किन्तु एक आदमी की नौकरी से इतना बड़ा परिवार चलाना किसीके भी बूते के बाहर है।'

उत्तर मे प्रियगोपाल कुछ कहने जा रहे थे कि हठात् लड़के के चेहरे की ओर देखकर रुक गए। हथौड़े की चोट-सी लगी बेटे की बात—इतना बड़ा परिवार !

भोम्बल के परिवार को उन्होने ही बड़ा किया है। पति-पत्नी और एक छोटा बच्चा। तीन लड़के, लड़किया। क्या इसी बात की खरोंच दे

रहा है भोम्बल ? इतनी बड़ी चोट अपने बीमार बाप को दे सका ? वह क्या कभी छोटा नहीं था ? उसे क्या खिला-पिलाकर, पढ़ा-लिखाकर प्रियगोपाल ने लायक नहीं बनाया ? या मां के पेट से निकलकर एका-एक ही वह बड़ा हो गया और नौकरी करने लगा ?

दुःख, भावावेग के कारण प्रियगोपाल के मुंह से कोई बात नहीं निकली।

इसके बाद जिस अस्त्र से लड़के ने प्रहार किया था, उसी अस्त्र से लड़के को आघात दिया उन्होंने। उसे दिखला दिया उसका पौरुष, उसकी कायरता। बोले, 'इतना बड़ा परिवार! बच्चे-बच्चे मिलाकर सात प्राणी हैं खाने वाले। सत्रह बरस की उम्र में ऐसे चौदह प्राणियों का बोझ मेरे कन्धों पर पड़ा था भोम्बल! लेकिन इसके लिए तुम्हारी मां को हमने नौकरी करने नहीं भेजा।'

सुव्रत जवाब दे सकता था; पर उस दिन और कुछ कहना उचित नहीं लगा। यूं भी पत्नी द्वारा नौकरी किए जाने को वह मर्यादाहीन नहीं मानता। कुछ और न कहकर वह अपने निश्चय पर अडिग रहा।

प्रियगोपाल बोले, वे पत्नी और बच्चों को लेकर गांव चले जाएंगे।

लेकिन महीने के आखिरी सप्ताह में राह-खर्च कहां से आता ? नया अंग्रेजी महीना आए बिना सुव्रत उन्हें गांव जाने का खर्च देने में असमर्थ है।

इसके बाद सुव्रत की ही जीत हुई। अपनी जिद पर वह अड़ा रहा। जिद नहीं, युक्ति-मार्ग!

दूसरे दिन श्वसुर ने भोजन नहीं किया; सास ने भी नहीं खाया। नौ बजते न बजते पति की थाली में आरती जब खाने बैठी तब कौर गले में अटकने-से लगे।

सरोजिनीदेवी गंभीर मुह बनाकर खाना परोस गई। आधा से अधिक भात थाली में पड़ा रह गया।

साधारणतः रंगीन कपड़े आरती को पसन्द आते हैं, किन्तु उसने उस दिन सादे रंग की शान्तिपुरी साड़ी पहनी। सादा ही ब्लाउज, किनारे पर डिजाइन। गहने के नाम पर हाथ में दो चूड़ियां, गले में पतला हार; मुह पर प्रसाधन की क्षीण आभा।

भोजन के बाद एक पान खाए बिना आरती नहीं रहती थी; लेकिन उस दिन सिर्फ सुपारी का एक टुकड़ा मुह में रख लिया। पान खाकर आफिस जाना ठीक नहीं। इससे होंठ लाल जरूर हो जाते हैं, लेकिन दांतों की शुभ्रता नहीं रहती।

तेरह वर्ष की ननद लीला आकर कान के पास फुसफुसाई, 'भाभी, आज तुम बहुत सुन्दर लग रही हो!'

पहले तो सुनकर थोड़ी लाज आई। फिर ननद के गाल पर चुटकी काट बोली, 'शैतान कहीं की! और दिन शायद बदसूरत लगती थी, क्यों?'

किन्तु घर से निकलने के समय एक समस्या उठ खड़ी हुई। पांच साल का उसका बच्चा पिण्टू अपनी छोटी बुआ की गोद में मचलकर हाथ-पैर पटकने लगा कि वह मां की गोद में जाएगा!

आरती की साड़ी के किनारे को अपनी मुट्ठी में दाबे वह कह रहा था, 'मैं भी नौकरी करने जाऊंगा, मां! मुझे साथ ले चलो।'

आरती ने मुंह घुमाकर अपनी छलछलाती आंखों को छिपाया। इसके बाद बच्चे की ओर सस्नेह देखकर बोली, 'ठीक है, जाना। पहले तुम्हारी नौकरी लग जाए, इसके बाद जरूर जाना।'

लेकिन पिण्टू तो अभी ही जाएगा! उसकी नौकरी लग गई है। उसे भी आज ही ज्वाइन करना है!

प्रियगोपाल घर से निकलकर बाहर चले गए। सरोजिनीदेवी घर के भीतर से नहीं निकलीं। जिद करके ही पोते को गोद में नहीं लिया। बोलीं, 'क्यों, नौकरी करने जा सकती है, बच्चे की देखभाल का इन्तजाम नहीं कर सकती? नौकर-दाई रख जाए—बच्चे को संभालने के लिए। मैं किसीके बच्चे को नहीं संभालूंगी!'

दुःख और अभिमान के कारण सरोजिनीदेवी की आंखें छलछला आईं, 'कितने अरमान से भोम्बल का ब्याह किया था! खूब सुख मिला मुझे!'

बड़े भाई की डांट पर नीला और नन्तू-गन्तू जबर्दस्ती पिण्टू को हटा ले गए।

गली पार करने पर भी बच्चे के रोने की आवाज आती रही। पति के साथ ट्राम में बैठे रहने पर भी मानो बच्चे के रोने की आवाज कानों में गूंजती रही।

सुब्रत ने पूछा, 'बात क्या है? इस तरह बार-बार बाहर क्या देख रही हो?'

आरती ने कुंठित, कातर स्वर में कहा, 'मन खराब हो गया है। ऐसे तो मुन्ना कभी मुझसे लिपटता नहीं। दादा, दादी, चाचा, बुआ—इनकी ही गोद में घूमता रहता है। लेकिन आज देखा न, क्या हुआ?'

सुब्रत ने धीरे से उत्तर दिया, 'हां, देखा।'

आरती ने करुण स्वर में कहा, 'लगता है, आज सारा दिन खूब

रोएगा।'

सुव्रत हंसा, 'क्या सिर्फ मुन्ना ही रोएगा? और एक व्यक्ति की आंखों के पानी से कैनिंग स्ट्रीट डूब जाएगा! खूब, ऐसे ही नौकरी करोगी तुम?'

लेकिन सप्ताह-दो सप्ताह बीतते न बीतते आरती ने मानो सुव्रत को दिखा दिया कि नौकरी किस प्रकार की जा सकती है। अपने आफिस के काम में वफादार सुव्रत को भी हार माननी पड़ी। भोर में उठकर, घर-गृहस्थी के काम शुरू करने के साथ ही साथ आरती आफिस जाने की भी तैयारी करती रहती। सवेरे ही नहा-धो लेती, चाय पीने का काम खत्म कर, अखबार पर एक नजर दौड़ाती। रसोईघर का कार्य-भार अब सरोजिनीदेवी पर आ गया है। आरती बीच-बीच में मदद करती रहती —सब्जी या मछली काटती-धोती। नौकरी करने के पहले आरती जितना काम करती लगभग उतनी ही मेहनत करती। रसोईघर का स्वामित्व शुरू से ही सरोजिनीदेवी के जिम्मे है।

रसोई का काम करते हुए सरोजिनीदेवी बड़बड़ाती, 'हुं! आई हैं महारानी हाथ बंटाने! बेटे का ब्याह कर अच्छा सुख मिला मुझे!'

प्रायः आठ बजे से ही आरती सुव्रत को नहाने के लिए याद दिलाने लगती, 'अब उठो, इसके बाद बाथरूम खाली नहीं मिलेगा। आफिस जाने की देर हो जाएगी।'

सुव्रत उत्तर देता, 'मुझे लेट होने का डर नहीं है। मैं ठीक समय पर पहुंच जाऊंगा। लेकिन तुम एकाध दिन लेट भी हो जाओ तो हर्ज क्या है?'

आरती जैसे सिहर उठती, 'बाप रे! हिमांशु बाबू यह बात बिलकुल पसन्द नहीं करते।'

'मुखर्जी एण्ड मुखर्जी' कंपनी के हिमांशु मुखर्जी यद्यपि कम उम्र के

हैं, पद-मर्यादा में वे सबसे सीनियर हैं। साहब मिजाज के आदमी हैं; समय की पाबन्दी और अनुशासन पर उनकी कड़ी नजर है। एक आंख रहती है हाजिरी के रजिस्टर पर, दूसरी घड़ी की सुई पर। सभी कर्मचारियों के साथ एक समान व्यवहार करते हैं। मर्द-औरत में भेद नहीं करते। महिला कर्मचारियों के लिए अलग बैठने की व्यवस्था जरूर है, लेकिन महिलाओं के साथ विशेष पक्षपात नहीं करते। तीस से पैंतीस के बीच उम्र है। लम्बे, मजबूत काठी के व्यक्ति हैं। उन्हें सुदर्शन तो नहीं कहा जा सकता; लेकिन अच्छे स्वास्थ्य और तीक्ष्ण बुद्धि के कारण रूप की कमी नहीं खटकती। अच्छे सम्पन्न परिवार के व्यक्ति हैं। विवाह किया है मध्यवर्ग की एक एम० ए० पास लड़की से।

'लव मैरेज!' कहकर मुस्कराई थी आरती। एक दिन कार में आई थीं आफिस। अच्छा सुन्दर चेहरा है।

हिमांशु मुखर्जी का बढ़िया स्वास्थ्य या उनकी पत्नी का सुन्दर चेहरा, यह सब आरती के लिए मानो गर्व की बात हो। उसके वर्णन करने के ढंग से सुव्रत को ऐसा ही लगा था।

पति को जल्दी से खिलाकर उसी थाली में बिना संकोच बैठ जाती हैं आरती। सरोजिनीदेवी को पुकारकर कहती हैं, 'दीजिए मांजी, जो भी पका हो, जल्दी दे दीजिए।'

अब आरती की थाली में भात नहीं बचा रहता। पति से भी जल्दी वह खा-पी लेती। देर होने पर साथ ही एक थाली खींचकर बैठ जाती।

सास वहां से हट जातीं।

नीला खाना परोसते हुए कहती, 'अब अलग-अलग क्यों भाभी? एक ही थाली में दोनों बैठ जाते! देखने में कितना अच्छा लगता!'

सब व्यवस्था सहज, स्वाभाविक है। लेकिन जाने क्यों सुव्रत के मन में कोई कांटा चुभ जाता है।

खाने के बाद साड़ी बदलने का काम। तीन-तीन दिनों के बीच आफिस की साड़ी बदलती है भारती। और इधर सुव्रत को एक ही धोती पांच दिनों तक पहननी पड़ती है! एक दिन इसकी चर्चा चलने पर भारती बोली, 'मिस्टर मुखर्जी फूहड़पन को बिलकुल बर्दाश्त नहीं करते। जिस तरह वे स्वयं टिप-टाप रहते हैं, आफिस को भी वैसा ही देखना चाहते हैं।'

किन्तु भारती का गर्व केवल हिमांशु मुखर्जी को लेकर ही नहीं है।

नई मशीन का प्रयोग सिखलाने के सिलसिले में खरीदारों के घर भवानीपुर, बालीगंज आदि जगहों के सम्पन्न परिवारों में जाना पड़ता। इन आभिजात परिवारों में रोज ही उसकी बातचीत होती।

विचित्र पैटर्न के उनके दो-तल्ले, तीन-तल्ले मकान हैं। गैरेज में नई-नई मॉडल की मोटरें हैं। किसीके पास एक, किसीके पास कई-कई।

इन मकानों के बड़े-बड़े कमरे बिलकुल साफ-सुथरे रहते हैं। सुरुचि से सजाए सामान उनमें है। कांच की सुन्दर अलमारियों में किताबें सजी हुई। देखकर आंखें जुड़ा जाती हैं।

इन घरों में रहने वाली प्रायः सभी महिलाएं रूपवती हैं। शिक्षा, शालीनता से सम्पन्न वे मधुर स्वभाव की हैं।

भारती जहां जाती है, आदर-मान पाती है। एक दिन चितरंजन एवेन्यू में एक मारवाड़ी के घर गई थी। उस घर की सुन्दर बहू ने एक नई मशीन खरीदी है। सिर्फ बहू ही सुन्दर नहीं, उसका पति भी रूपवान है। पच्चीस-छब्बीस की उम्र होगी।

मारवाड़ी होने से क्या होता है—तोंद नहीं है। बातचीत में बहुत शालीन। लौटने के समय उन्होंने गाड़ी निकाल ली। उनकी पत्नी भी साथ थी। भारती को बिना पहुंचाए वे मानेंगे नहीं।

सुव्रत ने भौंहें सिकोड़कर पूछा, 'तुम उनकी कार में बैठने क्यों गईं?'

आरती ने जवाब दिया, 'वाह ! इससे क्या होता है ! भले आदमी ने इतना आग्रह किया, और फिर उनकी स्त्री साथ थीं। इसमें बुरा क्या है ?'

मारवाड़ी भद्र सज्जन काफी उत्सुक दिखे। आरती के घर और आफिस के बारे में बहुत सारे सवाल किए। उनके साथ बातचीत अंग्रेजी में हुई थी। उनकी पत्नी अंग्रेजी नहीं जानतीं, इसलिए उनसे हिन्दी में बातचीत हुई। और ड्राइवर था बंगाली—ढाका जिले का। उसके साथ एक बार बंगला में बातचीत हुई।

'एकसाथ ही तीन-तीन भाषाएं ! इस तरह का अवसर कभी तुम्हें मिला है ?' प्रसन्नता और आंखों में चमक भरकर आरती पति की ओर देखने लगी।

'लेकिन अंग्रेजी में ठीक से बात कर सकी थीं तुम ?' सुव्रत ने संदेह प्रकट किया।

'क्यों नहीं कर सकती थी ? एडिथ के साथ बातचीत करते-करते मुझे अंग्रेजी बोलने का अभ्यास हो गया है।' आरती बोली।

इस एडिथ की चर्चा बीच-बीच में सुनता रहा है सुव्रत। आरती की ऐंग्लो-इंडियन सहकर्मिणी। 'मुखर्जी एण्ड मुखर्जी' कम्पनी ने उसे भी चुना था। साहबों की बस्ती की तरफ या वैसी जगहों में जहां बंगाली नहीं रहते, उधर 'एडिथ सिमन्स' ही जाती है मशीन डिमांस्ट्रेशन के लिए। उम्र मे वह आरती से बड़ी होगी, लेकिन इस तरह सज-धजकर आती है कि देखने में छोटी लगती है। आरती के मुंह से उसका रूप-वर्णन सुनते-सुनते सुव्रत के सामने एक तस्वीर खड़ी हो जाती है—लम्बी, आकर्षक, सांवली-सी, होंठों पर गहरा लिपस्टिक, हाथ की उंगलियां पालिश से चमकती !

सुव्रत ने सावधान किया, 'खबरदार, ऐसी औरतों से अधिक मेल-जोल बढ़ाना ठीक नहीं !'

भारती बोली, 'ऐसा क्या मेल-जोल है ! एकसाथ काम करने की वजह से जितना बोलना-चालना आवश्यक है, उतना ही भर। लेकिन पहले वह बात-बात मे कहती थी, आई केन नॉट फॉलो यू ! तुम्हारी अंग्रेजी जर्मन या इटालियन लोगों की तरह है। इससे कहीं अच्छा है, तुम हिन्दी में बात करो। मैं हिन्दी जानती हूं।'

लेकिन भारती भी हार मानने वाली नहीं। उसने जितनी शिक्षा पाई है, उसकी चौथाई भी एडिथ ने नही पाई होगी। वह भारती के अंग्रेजी उच्चारण की आलोचना करेगी!

भारती ने एडिथ को सुना दिया है, 'तुम यदि मेरी अंग्रेजी नहीं समझ पाती, तो इसमें मेरी लाचारी है मिसेज सिमन्स! इतने दिनों तक हम लोग तुम्हारे उच्चारण की नकल करते रहे; तुम लोगों का भ्रष्ट बंगला उच्चारण सहते रहे! अब हम जिस तरह की अंग्रेजी बोलते है, वही काफी है! अब से हमारे उच्चारण को ही तुम्हें अपनाना होगा।'

पति के सम्मुख एडिथ से हुई बातचीत का वर्णन करते हुए भारती खिलखिला उठी, 'क्यों, ठीक कहा न?'

८

पहले महीने का वेतन मिलने पर देवर, ननद और बच्चे के लिए सन्तरे और मीठी गोलियां, सास के लिए बढ़िया किस्म के जर्दे की

डिबिया, बीमार श्वसुर के लिए अंगूर, पति के लिए कीमती सिगरेट का डिब्बा और अपने ब्लाउज के लिए दो गज अरगंडी लेती आई थी आरती।

सुव्रत ने इन चीजों को देखकर मुंह लटका लिया, 'लगता है, वेतन के आधे रुपये तुम बाजार में फेंक आई!'

आरती बोली, 'हुं, तुमने यही समझा है, यह देखो...' हैंडबैग के भीतर से मनिबैग खोल एक सौ रुपये का नोट निकालकर दिखलाया।

सुव्रत ने चकित होकर पूछा, 'फिर तुम्हें बाकी पैसे कहां से मिले? क्या पहले महीने में ही हिमांशु बाबू ने अपने कर्मचारियों को बख्शीश दी है?' कहकर विचित्र ढंग से मुस्कराया था सुव्रत।

आरती का चेहरा थोड़ा लाल हो उठा। पति की ओर देख तेज स्वर में बोली, 'तुम बहुत बुरे ढंग से बात करते हो! बख्शीश वे हमें किस साहस से देंगे? क्या हम उनकी नौकरानियां हैं? बख्शीश नहीं, यह हम लोगों का हक था। हिमांशु बाबू को तो देने की बिलकुल इच्छा नहीं थी। हम लोगों ने इसे वसूला है!'

इसके बाद विस्तार से पति को आरती ने बताया।

'ऊनी मशीन' बेचने का कमीशन। एडिथ ने अपने परिचितों के बीच दो मशीनें बेचीं; आरती ने एक, मल्लिका ने एक—रमा ने कोई मशीन नहीं बेची। एजेण्ट लोग साढ़े बारह से पन्द्रह प्रतिशत तक कमीशन पाते हैं।

हिमांशु बाबू यह कमीशन उन्हें बिलकुल देना नहीं चाहते थे, क्योंकि आरती वगैरा आफिस के कर्मचारी हैं। उन्होंने हंसकर कहा था, 'यह तो आप लोगों की ही कम्पनी है। मशीन का जितना अधिक प्रचार होगा, आप लोगों के हक में फायदा होगा। आप लोग बाहर के एजेण्ट तो नहीं हैं कि आप लोगों को अलग से कमीशन दिया जाए।'

लेकिन एडिथ बड़ी चालाक है। उसे भुलावा नहीं दिया जा सकता—ऐंग्लो-इंडियन जो ठहरी ! उसका चेहरा ही अपनी बात कह रहा था। लेकिन इसके लिए उसने अपना मुंह नहीं खोला। आरती की ओर देखकर इशारा किया था क्योंकि योग्यता के हिसाब से मिस्टर मुखर्जी आरती को अधिक मानते हैं।

आरती ने ही तर्क देकर पांच प्रतिशत कमीशन वसूल करवाया। इसके लिए एडिथ और उसकी सहयोगिनें कृतज्ञ हैं। बेचारी रमा कमीशन की रकम न मिलने पर मुंह लटकाए जा रही थी। आरती और उसकी सहयोगिनों ने आपस में कमीशन के पैसे में से चन्दा कर उसे एक रेस्तरां में खिलाया-पिलाया और उपहार में स्नो की एक शीशी भेंट की।

९

उस दिन बहुत दिनों के बाद बढ़िया सिगरेट का कश ले रहा था सुव्रत। लेकिन जानें क्यों, पुराना स्वाद नहीं मिला।

आफिस से पूरा वेतन वह कभी घर नहीं ला सका। प्राविडेण्ट फंड और रिफ्रेशमेंट रूम के लिए पन्द्रह रुपये उसी समय निकाल देने पड़ते। और इधर आरती है कि पहले महीने से ही वेतन के अलावा कुछ 'ऊपरी' भी ले आती है ! इसके लिए उसका लोहा मानना ही पड़ता है। लेकिन 'परसेण्ट' और 'कमीशन' के शब्दों में जानें कैसी व्यावसायिक गन्ध आती

है! कीमती सिगरेट के धुएं से भी वह गन्ध नहीं जाती।

एक सौ रुपये का नोट वह पहले श्वसुर को ही देने के लिए ले गई थी।

लेकिन प्रियगोपाल ने उस नोट को नहीं छुआ। पुत्रवधू की ओर उन्होंने जलती आंखों से देखा भर था। लेकिन आश्चर्य, गले से शोले जैसे शब्द नहीं निकले; आंखों से आंसू जरूर टपक पड़े। भीगे गले से उन्होंने कहा था, 'मेरा अपमान करने आई है, बेटी ?'

श्वसुर की बात तीर की तरह आरती के कलेजे में चुभी थी। कुछ क्षणों तक चुप रहकर, हल्के स्वर में आरती ने उत्तर दिया था, 'नहीं बाबूजी, 'प्रणामी' देने आई थी। सुना है, आज आपका जन्म-दिन है।'

बीमार, बिछावन पर लेटे प्रियगोपाल यह सुनकर उठ बैठे थे। सिर हिलाकर कहा था, 'नहीं, नहीं·· तुमने गलत सुना है। आज तो मेरी मौत का दिन है। चाहे जितने ही कोमल स्वर में तुम क्यों न बोलो बहू, यह 'प्रणामी' नहीं—'घूस' है! तुम लोग अच्छी तरह जानते हो, किसी न किसी रूप में मुझे यह 'घूस' लेनी ही होगी। इसीलिए तुम लोगों का इतना साहस बढ़ गया है।'

जमींदारी के सिरेश्तेदार पद पर कार्य करते हुए प्रियगोपाल बीच-बीच में घूस लेते रहे हैं। सिर्फ रैयतों से नहीं, रैयतों की पत्नियां भी औकात के मुताबिक 'घूस' देती रही हैं। वे इसे 'सलामी' कहते थे। उस समय प्रियगोपाल ने हाथ नहीं समेटा था। उनके सामने हाथ पसारने की ही प्रथा थी। सचमुच, तब प्रियगोपाल ने उचित 'प्रणामी' ही वसूली थी। लेकिन आज पुत्रवधू की 'प्रणामी' के स्वरूप को समझते उन्हें देर नहीं लगी। उनके आदर्श—उनके संस्कार—उनके पूरे व्यक्तित्व को एक सौ रुपये में खरीदने आई है आरती! जवानी में क्या ऐसे सैकड़ों रुपये उन्होंने नहीं कमाए, हजारों रुपये नहीं उड़ाए···?

लेकिन सरोजिनीदेवी ने बेटे और बहू का पक्ष लिया। पति को झिड़ककर बोलीं, 'तुम्हारी तो मति मारी गई है। कितनी साध से पहले महीने का वेतन बहू दे रही है, और तुम उसे रुला रहे हो! लो, हाथ बढ़ाकर ले लो।'

लेकिन प्रियगोपाल ने सिर हिला दिया, 'लेना हो तो तुम्हीं ले लो, भोम्बल की मां!'

१०

धीरे-धीरे फिर सब स्वाभाविक हो उठा। आरती के आफिस जाने की बात को लेकर अब हंगामा नहीं मचता। मान-अभिमान अपने मन के भीतर रखकर सरोजिनीदेवी अपना काम करती रहतीं। प्रियगोपाल भी इस बात को लेकर हाय-तोबा नहीं करते। बीच-बीच में निर्विकार मुद्रा में कह उठते हैं, 'जिनकी जो इच्छा हो, करें। संसार तो आनन्द-मय है जिसके मन को जिस तरह आनन्द मिले।' सुब्रत को पता है, इस शान्ति और निर्विकार भावना के पीछे एक अर्थनीतिक भित्ति है। सुब्रत के मासिक वेतन के साथ आरती के वेतन के रुपये मिल जाने पर गृहस्थी में थोड़ा निखार आ गया है।

सास को अवश्य थोड़ा अधिक काम करना पड़ता। इसके लिए वे हमेशा ताने देती रहतीं। इसीलिए आरती ने चौबीस घण्टे की एक नौक-

रानी रख ली। खाएगी और दस रुपये महीना वेतन लेगी। जो काम बहू करती थी, अब घर भी नौकरानी करेगी। सास को भी इससे राहत मिलेगी, मुंह से ताने भी कम निकलेंगे।

पहले तो सरोजिनीदेवी ने इसपर आपत्ति उठाई, 'क्यों, नौकरानी क्यों रहेगी ? मैं तो हूं ही।'

आरती बोली, 'आप भी कैसी बातें करती हैं मांजी ! घर का सारा काम आप अकेले कैसे कर पाएंगी ?'

सरोजिनीदेवी ने उत्तर दिया, 'मैं कहती हूं बहू, इतनी लाटसाहबी की जरूरत ही क्या है ! इससे तो अच्छा है, वे कुछ रुपये तुम मुझे ही दे दिया करो।'

आरती जीभ काटकर बोली, 'छिः, आप कैसी बातें करती हैं, मांजी! सब कुछ तो आपका है। आदमी की सुख-सुविधा के लिए तो रुपये होते हैं। रुपयों से मनुष्य और क्या करता है !'

सरोजिनीदेवी ने मुंह से चाहे जो कुछ कहा हो, रात-दिन की नौकरानी के चलते उन्हें काफी आराम मिलने लगा। नौकरानी का नाम है, कुमुद। कम उम्र में ही विधवा हो गई थी। किसी शरणार्थी कैंप से आरती उसे ले आई थी। जब आई थी, तब उसका चेहरा कंकाल की तरह था। लेकिन कुछ समय बीतते न बीतते शरीर में मांस भर गया। कुमुद बर्तन मांजती है, कपड़े धोती है—घर-गृहस्थी के जितने छोटे-बड़े काम हैं, सभी करती है। आरती भी काम लेना जानती है। आदमी को मीठी बोली से वश में करके किस प्रकार काम लिया जा सकता है, वह जानती है। हां, बीच-बीच में दो-एक आने पैसे वह उसके हाथ पर धर देती है, नहीं तो क्या केवल मीठे बोल से चिवड़े भूने जा सकते हैं ?

सरोजिनीदेवी नौकरानी को 'कुम्मी' कहकर पुकारती हैं। आरती

रानी रख ली। खाएगी और दस रुपये महीना वेतन लेगी। जो काम वहू करती थी, अब घर भी नौकरानी करेगी। सास को भी इससे राहत मिलेगी, मुंह से ताने भी कम निकलेंगे।

पहले तो सरोजिनीदेवी ने इसपर आपत्ति उठाई, 'क्यों, नौकरानी क्यों रहेगी ? मैं तो हूं ही।'

आरती बोली, 'आप भी कैसी बातें करती हैं मांजी ! घर का सारा काम आप अकेले कैसे कर पाएंगी ?'

सरोजिनीदेवी ने उत्तर दिया, 'मैं कहती हूं वहू, इतनी लाटसाहबी की जरूरत ही क्या है ! इससे तो अच्छा है, वे कुछ रुपये तुम मुझे ही दे दिया करो।'

आरती जीभ काटकर बोली, 'छिः, आप कैसी बातें करती हैं, मांजी! सब कुछ तो आपका है। आदमी की सुख-सुविधा के लिए तो रुपये होते हैं। रुपयों से मनुष्य और क्या करता है !'

सरोजिनीदेवी ने मुंह से चाहे जो कुछ कहा हो, रात-दिन की नौकरानी के चलते उन्हें काफी आराम मिलने लगा। नौकरानी का नाम है, कुमुद। कम उम्र में ही विधवा हो गई थी। किसी शरणार्थी कैंप से आरती उसे ले आई थी। जब आई थी, तब उसका चेहरा कंकाल की तरह था। लेकिन कुछ समय बीतते न बीतते शरीर में मांस भर गया। कुमुद वर्तन मांजती है, कपड़े धोती है—घर-गृहस्थी के जितने छोटे-बड़े काम हैं, सभी करती है। आरती भी काम लेना जानती है। आदमी को मीठी बोली से वश में करके किस प्रकार काम लिया जा सकता है, वह जानती है। हां, बीच-बीच में दो-एक आने पैसे वह उसके हाथ पर धर देती है, नहीं तो क्या केवल मीठे बोल से चिवड़े भूने जा सकते हैं ?

सरोजिनीदेवी नौकरानी को 'कुम्मी' कहकर पुकारती हैं। आरती

नीति की दृष्टि से वे अब भी इसे गलत मानते हैं कि घर की बहू बाहर जाकर नौकरी करे ! इसकी चर्चा उठने पर इसके विरुद्ध तर्क देते। लेकिन लगता है, अब उनका शरीर ही इस तर्क के विरुद्ध चला गया है।

प्रियगोपाल का शरीर इस उम्र में कुछ अधिक आदर-यत्न खोजता है। इसने तो कम आंधी-तूफान नहीं झेले ! जाने कितने कष्ट, कितने रोग-शोक, फाके-उपवास सहता आया है यह शरीर। यह यदि अब कुछ आराम चाहता है तब इसे दोष नहीं दिया जा सकता।

आरती की नौकरी को लेकर इसलिए परिवार के सभी सदस्यों ने समझौता-सा कर लिया है।

अन्दर ही अन्दर सुव्रत को ही इस समझौते से बेचैनी होती है। इसे लेकर रात-दिन उसके मन में द्वन्द्व रहता है। वह अपने पिता की तरह पुरान-पंथी नहीं। वह प्रगतिवादी विचारों का है। समाज में, परिवार में, स्त्री-पुरुष के समान अधिकारों का वह हिमायती है। उन दोस्तों के साथ तर्क करता है जो ऐसा नहीं मानते। बाहर तक तो तर्क ठीक, लेकिन आलोचना-प्रत्यालोचना के बाद जब अपने घर में प्रगतिवाद का यह रूप आता है, तब उसे स्वीकार करना उतना सहज नहीं लगता।

कोई बड़ी बात लेकर नहीं, अत्यन्त साधारण आचार-व्यवहार की विभिन्नता को लेकर ही मन में कुछ चुभने लगता है।

जैसे अब उसी दिन की घटना लें। सवेरे के समय एक दोस्त आया था। अनिल सुव्रत के बचपन का दोस्त है। बहुत दिनों के बाद भेंट हुई थी। इच्छा हुई, अनिल के साथ आरती का परिचय करा दे, क्योंकि सुव्रत की पत्नी को अनिल ने कभी देखा नहीं था।

सोचा था, दोनों दोस्तों को आरती ही चाय पिलाएगी।

घर के वयोवृद्ध प्रियगोपाल को अवश्य ऐसी बातें पसन्द नहीं। वह दूसरे मर्द के सामने क्यों जाएगी ? उनके साथ क्यों बातचीत करेगी ? बिना सामने गए क्या अतिथि का सत्कार नहीं किया जा सकता ?

सरोजिनीदेवी को भी आजकल के ये आचरण पसन्द नहीं।

किन्तु सुव्रत ने इन अन्धविश्वासों की बेड़ियां तोड़ दी हैं। अपने दोस्तों के साथ आरती का परिचय कराया है, बातचीत करने दी है। उनमें से किसी-किसीके साथ आरती का पत्र-व्यवहार तक चलता है। मां-बाप के एतराज को उसने नहीं माना है। उनकी दुनिया के बीच उसने अपनी एक छोटी दुनिया बसा ली है।

उन दिनों के अदब-कायदे बिलकुल दूसरी तरह के थे। पिता के समय के बाद अब सुव्रत का समय है। नौकरी-पेशा है सुव्रत। मां-बाप के पुराने विचारों को छोड़ वह अपने विचारों पर अमल करता है। लेकिन आज दूसरी ओर से उसकी संवेदनशीलता पर आघात लगा।

सुव्रत ने सोचा था, आरती चाय लेकर आएगी। लेकिन आरती नहीं आई। आई नीला, सुव्रत की छोटी बहन।

सुव्रत ने पूछा, 'तुम्हारी भाभी कहां है ?'

नीति की दृष्टि से वे अब भी इसे गलत मानते हैं कि घर की बहू बाहर जाकर नौकरी करे ! इसकी चर्चा उठने पर इसके विरुद्ध तर्क देते। लेकिन लगता है, अब उनका शरीर ही इस तर्क के विरुद्ध चला गया है।

प्रियगोपाल का शरीर इस उम्र में कुछ अधिक आदर-यत्न खोजता है। इसने तो कम आंधी-तूफान नहीं झेले ! जाने कितने कष्ट, कितने रोग-शोक, फाके-उपवास सहता आया है यह शरीर। यह यदि अब कुछ आराम चाहता है तब इसे दोष नहीं दिया जा सकता।

आरती की नौकरी को लेकर इसलिए परिवार के सभी सदस्यों ने समझौता-सा कर लिया है।

अन्दर ही अन्दर सुव्रत को ही इस समझौते से बेचैनी होती है। इसे लेकर रात-दिन उसके मन में द्वन्द्व रहता है। वह अपने पिता की तरह पुरान-पंथी नहीं। वह प्रगतिवादी विचारों का है। समाज में, परिवार में, स्त्री-पुरुष के समान अधिकारों का वह हिमायती है। उन दोस्तों के साथ तर्क करता है जो ऐसा नहीं मानते। बाहर तक तो तर्क ठीक, लेकिन आलोचना-प्रत्यालोचना के बाद जब अपने घर में प्रगतिवाद का यह रूप आता है, तब उसे स्वीकार करना उतना सहज नहीं लगता।

कोई बड़ी बात लेकर नहीं, अत्यन्त साधारण आचार-व्यवहार की विभिन्नता को लेकर ही मन में कुछ चुभने लगता है।

जैसे अब उसी दिन की घटना लें। सवेरे के समय एक दोस्त आया था। अनिल सुव्रत के बचपन का दोस्त है। बहुत दिनों के बाद भेंट हुई थी। इच्छा हुई, अनिल के साथ भारती का परिचय करा दे, क्योंकि सुव्रत की पत्नी को अनिल ने कभी देखा नहीं था।

सोचा था, दोनों दोस्तों को भारती ही चाय पिलाएगी।

घर के वयोवृद्ध प्रियगोपाल को अवश्य ऐसी बातें पसन्द नहीं। बहू दूसरे मर्द के सामने क्यों जाएगी ? उनके साथ क्यों बातचीत करेगी ? बिना सामने गए क्या अतिथि का सत्कार नहीं किया जा सकता ?

सरोजिनीदेवी को भी आजकल के ये आचरण पसन्द नहीं।

किन्तु सुव्रत ने इन अन्धविश्वासों की बेड़ियां तोड़ दी हैं। अपने दोस्तों के साथ भारती का परिचय कराया है, बातचीत करने दी है। उनमें से किसी-किसीके साथ भारती का पत्र-व्यवहार तक चलता है। मां-बाप के एतराज को उसने नहीं माना है। उनकी दुनिया के बीच उसने अपनी एक छोटी दुनिया बना ली है।

उन दिनों के अदब-कायदे बिलकुल दूसरी तरह के थे। पिता के समय के बाद अब सुव्रत का समय है। नौकरी-पेशा है सुव्रत। मां-बाप के पुराने विचारों को छोड़ वह अपने विचारों पर अमल करता है। लेकिन आज दूसरी ओर से उसकी संवेदनशीलता पर आघात लगा।

सुव्रत ने सोचा था, भारती चाय लेकर आएगी। लेकिन भारती नहीं आई। आई नीला, सुव्रत की छोटी बहन।

सुव्रत ने पूछा, 'तुम्हारी भाभी कहां है ?'

नीला ने उत्तर दिया, 'भाभी बाथरूम में हैं। आज सवेरे ही भाभी को आफिस जाना है।'

मित्र ने कहा, 'तुम्हारी पत्नी नौकरी करती हैं, यह तो तुमने बताया नहीं था!'

सुव्रत बोला, 'हां भाई, कुछ ही दिन हुए, नौकरी करने लगी है।'

यह लज्जा की बात नहीं, गौरव की बात है। फिर भी सुव्रत ने अपने मित्र से इस बात को जाने क्यों छिपाया था।

अनिल बोला, 'अच्छा भाई, अब हम चलते हैं। लगता है, मैं असमय आ गया हूं। मुझे तो आफिस का कोई बन्धन नहीं है।'

लेकिन सुव्रत ने अनिल को उठने नहीं दिया; और कुछ समय तक उसे बिठाए रखा। आशा थी, दो-चार मिनट के लिए आरती समय निकालकर यहां आएगी। लेकिन वह नहीं आई।

अन्त में वह अनिल को दरवाजे तक छोड़ आया। कमरे के भीतर जाकर देखा, आरती भात खाने बैठी है। सुव्रत को आश्चर्य हुआ, 'यह क्या, अभी ही खाने बैठ गई?'

आरती लजाती हुई बोली, 'क्या करूं, आफिस का समय जो हो गया!'

'साढ़े आठ बजे ही तुम्हारे आफिस जाने का समय हो गया?'

आरती मुस्कराकर बोली, 'यही तो हो गया, देखो न!'

सुव्रत वहां से हट गया। मुंह फाड़कर आरती बड़े-बड़े कौर निगल रही थी। सुव्रत को देखने में बड़ा बुरा लगा।

शायद इसलिए औरतों को खाते, मुंह धोते, दांत मांजते देखना पुरुषों के लिए निषिद्ध है। पहले वे सारे कार्य पुरुष के सामने स्त्री नहीं करती थीं, एक परदा रहता था। शायद इसी परदे के कारण पुरुषों की दृष्टि

मे नारी का सौन्दर्य अक्षुण्ण बना रहता था। उसके रूप का रहस्य, रूप शेष होने पर भी रहस्य ही बना रहता था।

१२

लेकिन वे दिन अब नहीं रहे। आज के सभ्य समाज में, पुरुष और नारी समान उत्साह के साथ अपने बीच के पर्दे को फाड़ फेंकने में लगे हैं। नारी आज अपने लिए कोई रहस्य नहीं रखना चाहती। एकसाथ ही खाना-पीना, उठना-बैठना, घूमना-फिरना—सभी खुले रंगमंच पर हो रहा है; पर्दे के पीछे नहीं, पर्दे के बाहर! किसी प्रकार का 'इल्यूजन' वह नहीं रखना चाहती। लेकिन इस रहस्य की, माया को छोड़ देने से क्या जीवन मधुर हो सकता है?

खाना खाकर दस मिनट में ही आरती आफिस जाने के लिए तैयार हो गई। पहले जिसे साज-शृंगार में आधा घंटे से कम समय नहीं लगता था, वह आज कार्य की व्यस्तता के कारण किस तरह बदल गई है!

सुव्रत मेज पर बैठकर छोटे आईने के सामने दाढ़ी बना रहा था। आरती जाने के पहले पति से कुछ बातचीत करने आई। मुस्कराकर बोली, 'चलती हूं। तुम्हें तो अभी काफी समय लगेगा।'

सुव्रत ने उत्तर दिया, 'हूं····'

आरती बोली, 'इस तरह मुंह लटकाकर क्यों बैठे हो? बाहर जा

रही हूं। अब दिन-भर भेंट नहीं होगी। थोड़ा हंसकर विदा दो।

सुव्रत ने फिर उत्तर दिया, 'हूं···'

आरती बोली, 'चलती हूं। तुम्हारी हंसी तो अब बाहर नहीं रहती। सन्दूक के भीतर ताला-चाभी बन्द कर उसे रखते हो। खोलकर बाहर निकालने में समय लगेगा। तब तक लेट हो जाऊंगी।'

सुव्रत का जवाब सुनने के लिए आरती नहीं रुकी।

१३

सस्ता दाढ़ी पुराने ब्लेड से नहीं कटना चाहती। सुव्रत सेफ्टिरेजर को बार-बार घुमाता। इस तरह की बातें आफिस जाने के समय सुव्रत ही पहले किया करता था। किसी साधारण नोक-झोंक के बाद जब आरती मुंह लटका लेती, तब सुव्रत हंसकर कहता, 'अजी, सुनती हो, थोड़ा मुस्कराकर विदा दो।'

आज समय बदल गया है। सुव्रत की बात आरती कहने लगी है; लेकिन आरती की तरह सुव्रत सहज रूप में कहां हंस पाता है?

उस समय पति के सामने आरती खाना नहीं खाती थी। छुट्टी के दिन, जब दोस्तों के अड्डे पर काफी देर हो जाती थी और वह एक-डेढ़ बजे घर लौटता था तो पाता कि सबने तो खा-पी लिया है, केवल आरती बिना खाए उसके आने की बाट जोह रही है।

सुव्रत झेंपकर कहता, 'सुरेन के यहां बातचीत में काफी देर हो गई। तुम खा लेती…'

भारती कहती, 'ऐसा नहीं होता है!'

पुराने संस्कारों के लिए मुंह से पत्नी को भले ही मीठी-झिड़की देना, मन ही मन सुव्रत खुश होता था। आज उसे लगता है, हिन्दू नारी के उस पुराने संस्कार के बीच नारी की दासता या पर-निर्भरता नहीं, वरन् एक गहरा, परम मधुर प्रेम का स्रोत था। सास-श्वसुर से आंखें बचाकर, भारती की वह गोपन पति-सेवा आज भी सुव्रत को याद आती है। खाना खत्म होने पर पानी का जग आगे बढ़ाना, धुला हुआ सफेद तौलिया लेकर खड़ी रहना, तौलिये के बदले शरारत से सुव्रत द्वारा पत्नी की साड़ी से मुंह पोंछना, खाने की कटोरी में जानबूझकर पत्नी के लिए मछली का टुकड़ा छोड़ देना, ये पुराने मधुर दिन अब कभी लौट-कर नहीं आएंगे। इसके बदले, आधुनिक प्रगतिवादी सुव्रत ने स्त्री को स्वावलम्बिनी बना दिया है। कहा है, 'जाओ, रुपये कमाकर ले आओ।'

जो एक दिन सुहाग की सेवारूपी अवगाहरूपिणी थी, उसे सुव्रत ने एक स्थूल प्रयोजन में लगा दिया है। लेकिन अब सिर धुनने से फायदा!

आज ऊंची एड़ी के जूते खटखटाती भारती उसके सामने से गुजर जाती है। ट्राम-बस में अकेले सफर करना उसने सीख लिया है। शहरी हवा की प्रतियोगिता में मानो वह सबको पीछे छोड़ जाएगी!

लेकिन कुछ ही समय पहले उसकी निर्भरता का अन्त नहीं था। सुव्रत के साथ ही वह आफिस जाने के लिए निकलती। सास-श्वसुर के सामने पति के साथ बाहर निकलने उसे लाज लगती थी। दो-चार मिनट आगे-पीछे का हिसाब कर लेती। आगे निकलकर भी भारती बस-स्टाप के पास जाकर खड़ी रहती। किसी-किसी दिन पत्नी के लिए सुव्रत को खड़ा रहना पड़ता। एक ही बस में दोनों जाते। पत्नी को

आगे बढ़ने देता सुव्रत । हंसकर कहता, 'लेडीज फर्स्ट । आज तुम मेरी अनुगामिनी नहीं, पुरोगामिनी हो !'

सब दिन तो नहीं—हां, किसी-किसी दिन सुव्रत को पत्नी के पास बैठने का सुयोग मिलता । हां, वह सुयोग ही होता । आफिस जाने वाली आरती जैसे कोई दूसरी महिला लगती—मानो उसकी वेश-भूषा, हाव-भाव, कथा-वार्ता में नये रहस्य-रोमांच की छाप हो ! पास में बैठी स्त्री को दूरागता, अपरिचिता, कोई दूसरी महिला की कल्पना करते हुए अच्छा लगता सुव्रत को । पत्नी को छोड़ और किसी स्त्री के साथ इतने घनिष्ठ भाव से मिलने-जुलने का अवसर नहीं मिला है । पत्नी को ही अनेक रूपों में, अनेक कल्पनाओं में देखकर विविधता की आकांक्षा उसने पूरी की है ।

किसी-किसी दिन यदि बस में चढ़ते हुए शरीर से शरीर छू जाता, तब शरारत के स्वर में सुव्रत कहता, 'सॉरी···'

आरती लजाकर फुसफुसाती, 'क्या करते हो···!'

सुव्रत जवाब देता, 'भद्र महिला के साथ अगर कोई बेअदबी हो जाए तब क्या माफी नही मांगनी चाहिए ?'

आरती कहती, 'जैसी बेअदबी की है, दूसरी महिला होती तो क्या तुम्हें ऐसे ही छोड़ देती ?'

सुव्रत कहता, 'कोई दूसरी महिला होने पर शायद माफ नहीं करती । लेकिन मेरी जगह यदि और कोई युवक···'

आरती धमकाने के स्वर में कहती, 'क्या बकते हो ! लोग क्या सोचते होंगे ?'

सुव्रत ने उत्तर दिया, 'सोचते होंगे—किसी और की पत्नी किसी और के पति के साथ बैठकर गप्पें लगा रही है । दोनों के बीच गहरी दोस्ती है ।'

आरती ने हँसकर कहा, 'ओ हो···यदि ऐसा होता तो कितना अच्छा होता ! तुम इस बात को बर्दाश्त कर पाते ?'

सुव्रत जवाब देता, 'बर्दाश्त करने की बात कहती हो ! दिल टूट-कर टुकड़े-टुकड़े हो जाते !'

आरती बोली, 'ऐसा ! लेकिन मुझे कुछ नहीं होता।'

सिर्फ एकमात्र आफिस जाना ही नहीं, आफिस से वापसी में भी साथ-साथ लौटते। सुव्रत का बैंक मैंगोलेन में और आरती का आफिस कैनिंग स्ट्रीट में। कुछ खास दूरी नहीं है। लेकिन फिर भी कोई किसी-के आफिस में जाकर हाजिर नहीं हुआ है। रास्ते में ही भेंट की है। इसीमें मजा है, रोमांस है !

मिशन रोड से सुव्रत किसी-किसी दिन पत्नी को लेकर साथ-साथ पैदल चला है।

सुव्रत पूछता, 'कब से खड़ी हो ?'

आरती कहती 'ज्यादा नहीं, पांच-सात मिनट हुए होंगे।'

सुव्रत हंसकर कहता, 'इन पांच-सात मिनटों में कितने लोग तुम्हें 'घूरते' हुए गए हैं, बतलाओ तो ?'

आरती कहती, 'तुम बहुत बेकार की बातें करने लगते हो ! मैं क्या उन्हें गिनती रही हूं ?'

सुव्रत कहता, 'तो इसका यह मतलब हुआ कि वे अनगिनत हैं !'

आरती ने जवाब दिया, 'ऐसा क्यों होने लगा ! वे सभी भद्र आदमी हैं। तुम्हारी तरह लोभी नहीं।'

सुव्रत झूठे अभिमान के साथ कहता, 'इसका मतलब कि संसार के सभी पुरुष सज्जन हैं, सिर्फ एक तुम्हारा पति ही··'

आरती हार मानकर कहती, 'मेरे पति के समान कोई नहीं है। वे तो महापुरुष हैं ! लो, अब तो खुश हुए ?'

और कभी सुव्रत हठ करके पत्नी को किसी रेस्तरां में ले जाता।

'चलो, चलकर एक कप चाय पी लें।'

आरती ने आपत्ति की, 'भैया रे! वहां क्यों चाय पीएं? घर जाकर हम क्या चाय नहीं पी सकते? घर की चाय शायद तुम्हें अच्छी नहीं लगती?'

सुव्रत कहता, 'अच्छी क्यों नहीं लगती? लेकिन रेस्तरां की चाय का एक अपना अलग स्वाद होता है।'

आरती जवाब देती, 'जैसा स्वाद है, वह बिलकुल बेकार है। मेरा तो ऐसी जगहों में जाने पर जी मिचलाने लगता है।'

सुव्रत हंसकर कहता, 'चुप भी रहो! लोग सोचेंगे, देहाती-भुच्चड़ हैं। तुम्हें पता होना चाहिए कि ये रेस्तरां ही शहर के केलि-कुंज हैं, कितनी रोमांटिक घटनाएं यहां घटती रहती हैं! कितना लेना-देना, दिल लेने-देने की बातें—तुम्हें पता है?'

आरती ने उत्तर दिया, 'मुझे जानने की जरूरत नहीं। पिण्टू अब तक जरूर 'मां-मां' कहकर रो रहा होगा। चलो, अब घर चलें।'

सुव्रत ने कहा, 'हे राम! तुमने तो सारा रोमांस ही चौपट कर दिया! पिण्टू की देखभाल करने के लिए मां और बाबूजी तो हैं ही। फिर क्यों चिन्ता करती हो?'

आरती बोली, 'हां, बच्चे के लिए मेरा चिन्तित होना बिलकुल अस्वाभाविक है, क्यों?'

सुव्रत ने जवाब दिया था, 'अस्वाभाविक क्यों होने लगा? लेकिन बच्चे के बाप के विषय में भी कभी-कभी सोचो। यह भी बिलकुल स्वाभाविक और जायज मांग है।'

इसके बाद रेस्तरां के बॉय द्वारा 'बिल' दिए जाने पर सुव्रत ने अपनी पत्नी के साथ कम नोक-झोंक नहीं की।

पत्नी की ओर देखकर कहा था, 'मिसेज मजूमदार, 'बिल' का पेमेंट आप कर रही है न ?'

आरती भी हंसी थी, 'क्या खूब ! निहोरा करके चाय पिलाने ले आए और अब ऐसा कह रहे हो ! इतने कंजूस हो, इसीलिए तो तुम्हारे भाग्य के हिस्से केवल 'पत्नी' छोड़ और कोई नहीं पड़ी । आजकल के दिनों में 'पत्नी' को ही सबसे कम खर्च पर रखा जा सकता है । और कोई होती तो इसमें दुगुनी-तिगुनी रकम खर्च करवा देती !'

रेस्तरां से बाहर निकल आरती को साथ लेकर चौरंगी मोड़ पर खड़ा हो गया था सुव्रत ।

आरती ने पूछा, 'अब क्या हुआ ? एकाएक रुक क्यों गए ?'

सुव्रत बोला, 'देख रहा हूं, चारों ओर कितना प्रकाश है ! ऐसी संध्या में शहर देखना क्या तुम्हें अच्छा नहीं लगता ?'

आरती ने जवाब दिया, 'अच्छा क्यों नहीं लगेगा ?'

सुव्रत ने कहा था, 'इस महानगर का अलग-अलग समय में नया-नया रूप होता है । तुमने इसपर गौर किया है ? सवेरे इसका एक रूप है, दोपहर में दूसरा, संध्या में इसका एक और रूप होता है, रात में बिलकुल दूसरा । यदि कुछ गौर से देखो तब लगेगा, इस कलकत्ता की एक-एक जगह के भी कई-कई रूप होते हैं । बाग-बाजार को देखकर लगेगा मानो ये वाराणसी के घाट हैं । ऐसा मालूम होगा, जैसे अठारहवीं शताब्दी में हम हैं । और इस चौरंगी पर आने पर लगता है, मानो आधुनिक यूरोप के किसी छोटे टुकड़े को हम देख रहे हैं । सुना है, अंग्रेजों ने लन्दन को ध्यान में रखकर ही इस चौरंगी का निर्माण शुरू किया था । यही उनका खास कलकत्ता शहर था । यदि बालीगंज की तरफ जाओ, तब ऐसा नहीं लगेगा कि कभी वहां गांव था । वहां के लोग, उनका आचार-व्यवहार—सब दूसरी तरह के हैं । चौरंगी यदि लन्दन है, तब बालीगंज मानो पेरिस

है !'

आरती ने कहा था, 'मैं बालीगंज से परिचित हूं। वहां हमारी कंपनी के कई ग्राहक हैं।'

बस में पति की बगल में बैठी आरती ने भी इस विराट्-विस्मय की चर्चा की है। सचमुच, कलकत्ता जो कितना बड़ा और कितना विचित्र है, उसे उल्टाडांगा के एक छोटे-से घर के भीतर बैठे रहने से आरती कभी नहीं जान सकती थी।

सुव्रत ने ही इसे जानने का अवसर दिया है, पहचानने का मौका दिया है। कलकत्ता तो मात्र घरों का समूह ही नहीं है; सिर्फ रहने की जगह नहीं है। यह तो पुरुष और नारी का एक विराट् कर्मक्षेत्र है! घर की अपेक्षा शहर का बाह्य रूप ही अधिक मुखर है। यहां सभी अत्यन्त व्यस्त हैं। घोड़े-गाड़ी, ट्राम-बस, टैक्सियां, सभी मानो महाव्यस्तता में भागी जा रही हैं। आदमियों की भी यही हालत है। सभी मधुमक्खियों की तरह ही व्यस्त हैं, रुकने का समय ही कहां है?

और लोग भी कितने ही प्रकार के हैं! मारवाड़ी, पंजाबी, पेशावरी, चीनी, जापानी, यूरोप के कई देशों के लोग, सभीके चेहरे एक-से लगते हैं, लेकिन आरती को पता है, ये एक नहीं हैं; विभिन्न देशों के, विभिन्न जातियों के, विभिन्न भाषाओं के ये सभी मनुष्य विभिन्न उद्देश्यों के लिए यहां एकत्र हो गए हैं। आरती भी इनमें से एक है। सोचकर उसे अचरज लगता है। घर से बाहर निकलने पर, कलकत्ते के रास्ते और गलियों से, आफिस से, अदालतों से, कल-कारखानों से कलकत्ता का जो परिचय मिलता है और उसका जो रूप सामने आता है, विस्मय-विमुग्ध होकर आरती ने इसकी चर्चा की है। तब पति के प्रति कृतज्ञता का अन्त नहीं रहता। बार-बार उसने कहा है, 'तुमने मुझे बाहर आने दिया, तभी तो यह रूप देखने को मिला। नहीं तो मुझे क्या कुछ पता होता? यदि

और कुछ दिन पहले तुम मुझे कलकत्ता ले आते, अगर कुछ और दिन पहले तुमने ऐसा अवसर दिया होता···'

सुव्रत ने पूछा था, 'तब क्या होता ?'

आरती ने कहा था, 'तब हो सकता है, मैं कुछ और पढ़-लिख जाती···'

सुव्रत ने हंसकर पूछा था, 'इसके बाद ?'

आरती ने कहा था, 'तब और किसी बड़े आफिस में नौकरी करती, और भी अधिक रुपये कमाकर तुम्हें ला देती। घर की हालत और भी अच्छी होती। अच्छे मुहल्ले के अच्छे मकान में बड़े लोगों की तरह हम भी रहते···'

सुव्रत मन ही मन हंसा था। आरती सचमुच महानगर की नागरिका हो गई है, घोर भौतिकवादी ! धन-जन, सुख-सुविधाएं छोड मानो जीवन का और कोई लक्ष्य न हो !

सरोजिनीदेवी ने आकर टोका, "क्यों रे भोम्बल, तू कब से दाढ़ी बना रहा है ! क्या आफिस जाने का समय नहीं हुआ ? कब नहाएगा, खाएगा ? उठ अब···"

सुव्रत वर्तमान में लौट आया। बोला, "हां मां, उठता हूं···"

१४

कुछ दिन तो चुपचाप निकल गए। फिर एक दिन संध्या समय घूम-

कर जब प्रियगोपाल घर लौटे, तब उन्होंने एक तूफान खड़ा कर दिया।

सुव्रत कुछ ही मिनट पहले आफिस से लौटा था। आरती अभी तक नहीं आई थी। उसके लौटने का अभी समय नहीं हुआ। आफिस के समय के बाद भी उसे काम रहता है। शहर के विभिन्न हिस्सों में जाकर मशीन का डिमांस्ट्रेशन करना होता है। कभी-कभी मशीन की बिक्री भी कर लेती है। उसके पास बहुत काम है।

आरती से सुव्रत कई बार कह चुका है जल्दी घर लौटने के लिए। कह-कहकर थक गया है। इसके बाद तंग आकर कहना छोड़ दिया है। अब तो कभी कुछ नहीं कहता।

लेकिन प्रियगोपाल बाबू इस तरह छोड़ देने वाले जीव नहीं। घर में घुसते ही, रसोईघर के सामने खड़े होकर चिल्लाने लगे, "कहीं ऐसा सुना है कि घर की बहू आफिस जाने के बहाने सारे शहर का चक्कर लगाती फिरे ? जिसको-तिसको लेकर होटल-रेस्तरां में घुस जाती है, अड्डे जमाती है और राम जाने क्या-क्या करती है ! मेरा तो जात-धर्म कुछ नहीं रहा ! भोम्बल का ब्याह क्या यही सोचकर किया था कि सब कुछ खोना पड़ेगा ?"

सरोजिनीदेवी ने रसोई चढ़ा दी थी। तरकारी में नमक मिलाती हुई बोलीं, "मेरे पास रोने-धोने से क्या होगा ? लड़के से कहो, लड़के की बहू से कहो, वहां तो डर के मारे बोली नहीं निकलती !'

प्रियगोपाल गरज उठे, "मुझे छेड़ो मत भोम्बल की मां, गेहुंअन को ललकारो मत···"

सरोजिनीदेवी बोलीं, "हुं ! तुम कैसे गेहुंअन हो, इसका मुझे पता है ! फन तो है नहीं, सिर्फ झूठी फुफकार···!"

सुव्रत कुरते के बटन खोलता दरवाजे के पास आ खड़ा हुआ। बाप-मां दोनों को डांटते हुए बोला, "आप लोगों को क्या मिला है, कहिए भी !

सुबह नहीं, शाम नहीं, आदमी के अच्छे-बुरे लगने का ध्यान नहीं। हमेशा झगड़ा-झंझट ! यह कोई घर है या मछुआ बाजार ! इस मकान में और भी तो तीन किरायेदार रहते हैं। उनके यहां तो इतनी चीख-पुकार नहीं मची रहती !"

प्रियगोपाल बोले, "सारे झगड़े की जड़ तो तुम्हारी 'बहू' है ! दूसरों को दोष देने से पहले अपनी औरत को सम्हालो। यदि ऐसा कर सके, तभी समझूंगा तुम मर्द हो !"

पिता के कहने का ढंग, सुव्रत को कभी-कभी बहुत भद्दा लगता है। शिक्षा-दीक्षा, रुचि-प्रवृत्ति, सबमें उनके बीच खाई बढ़ती जा रही है। बीच-बीच में तो सुव्रत के सहने की सीमा लांघ जाती है। रोज-रोज जिस तरह ऐसी-वैसी बातें वे मुद्रा बदल-बदलकर कहते हैं कि सुव्रत का जी चाहता है, उनका मुंह नहीं देखे। प्रियगोपाल उसके पिता हैं, यह मानो कोई आकस्मिक घटना है। वह सोचता है, सचमुच पिता के साथ उसका कोई मेल नहीं, कोई समानता नहीं। जो है, वह सिर्फ विरोध है, उल्टा है। सुव्रत ने बीच-बीच में सोचा है कि वह अलग एक घर ले ले। किन्तु भरोसा नहीं होता। जितना कुछ वह कमा पाता है, उसमें अपना खर्च चलाकर, मां-बाप और भाई-बहनों के लिए क्या वह अलग से खर्च दे सकता है? उन्हें असहाय अवस्था में भी तो फेंका नहीं जा सकता।

पिता की उत्तेजक, दंभ-विद्रूप-भरी बातें सुनकर सुव्रत ने अपने को संयत रखने का प्रयत्न किया। गुस्सा उसे भी कम नहीं आया था, लेकिन इसे उसने प्रकट नहीं किया। पिता के सम्मुख खड़े होकर, शान्त स्वर में बोला, "आप इतना चिल्ला क्यों रहे हैं? शाम के समय सारे घर को सिर पर उठा लिया है ! ऐसा क्या हुआ है, कहिए भी।"

प्रियगोपाल ने अपने दन्तहीन मुंह को विकृत कर कहा, "होने को अब और बाकी क्या रह गया है ! जितना एक कान कट जाता .. इसे

दूसरे कान के कट जाने का भय रहता है। लेकिन जिसके दोनों कान ही कट गए हों, उसको लोक-लाज का क्या डर ? मेरे तो दोनों कान काट डाले गए हैं, भोम्बल !"

सुव्रत ने कहा, "यह सब उपमा-अलंकार छोड़कर सीधे कहिए कि हुआ क्या है ? यदि कुछ करना होगा, तो करूंगा।"

प्रियगोपाल ने गर्दन को नीचे झुकाकर कहा, "कहने लायक और कोई बात नहीं। बहू का चाल-चलन···"

सुव्रत ने झुंझलाकर कहा, "ऐसी बातें तो बहुत सुन चुका हूं। यदि और कोई बात हो तो कहिए।"

प्रियगोपाल बोले, "और क्या बात है, बेटे ! अपने गांव के प्रायः सभी लोग कलकत्ता आ गए हैं, सब एक-दूसरे को पहचानते हैं। कुचाल देख वे टिप्पणी भी करते हैं।"

सुव्रत ने कहा, "किसने क्या कहा, यही बतलाइए···"

प्रियगोपाल बोले, "सुबोधभद्र को जानते हो ? वही हम लोगों के 'कमारखाली' का सुबोधभद्र ? चौधरी वंश का तहसीलदार···याद है ?"

सुव्रत बोला, "ठीक है। लेकिन हुआ क्या ?"

प्रियगोपाल सिर झुकाकर बोले, "वह इन दिनों कलकत्ता में है। इसी उल्टाडांगा की 'नित्यानन्द ऑयल मिल' में काम करता है। उसी-ने यह घटना बताई। हम लोगों के घर तो उसका आना-जाना था। बहू को वह अच्छी तरह पहचानता है। उसने अपनी आंखों देखा कि चौरंगी मोड़ पर एक जो दो-तल्ला होटल है, उसीमें 'बहू' किसी एक युवक के साथ घुसी थी।"

पिता को झिड़कते हुए सुव्रत बोला, "अब आप चुप रहिए। देखा है तो देखा है ! मेरी पत्नी, जहां उसकी इच्छा होगी, जाएगी। जिसके साथ उसकी इच्छा होगी, घूमेगी। वह क्या करती है, क्या नहीं करती, यह

देखना मेरा काम है। इसे लेकर दूसरे के सिर में दर्द क्यों होने लगा?"

लड़के के इस कड़े रुख को देखकर प्रियगोपाल और सरोजिनीदेवी अवाक् रह गए।

सुव्रत बौखलाया हुआ कमरे के भीतर चला गया।

नन्हा पिण्टू मेज के पास बैठकर अपने-आप खेल रहा था। एक खिलौना मोटरगाड़ी को दीवार के एक छोर से दूसरी छोर तक ठेल देना था और फिर दौड़कर उसे दूसरी ओर ठेलना था।

बहुत ही खराब 'मूड' में सुव्रत चौकी पर जा बैठा। घर के भीतर काफी गर्मी है। घर में बिजली की रोशनी है, लेकिन अभी तक पंखे का इन्तजाम नहीं किया गया है। इसके चलते खर्च बढ़ सकता है। एक कमरे में पंखा लगा देने से तो काम नहीं चलेगा। दो कमरों के लिए दो पंखे चाहिए। इतने पैसे आएंगे कहां से? इसीलिए इस बिजलीयुग में हाथ के पंखे से ही संतोष करना पड़ता है।

निखिल हाथ का पंखा भी तो दिखलाई नहीं पड़ता। इधर-उधर देखकर सुव्रत ने लड़के से पूछा, "पंखा कहां है रे, पिण्टू?"

पिण्टू एकाएक अपना खेल समाप्त कर चौकी के अन्दर घुस गया और फिर वहां से पंखा निकालकर सामने आ खड़ा हुआ और पिता को पंखा झलने लगा।

छोटे हाथ से झले गए पंखे से हवा तो नहीं लगी, किन्तु मन छू गया। पंखे सहित बच्चे को अपनी गोद में लेकर सुव्रत बोला, "रहने दो, रहने दो! पंखा झलने की जरूरत नहीं। तुमने तो पितृभक्ति की हद कर दी!"

पिण्टू दुलार से पिता के गले लग गया और फिर पिता के कान के पास अपना मुंह ले जाकर आनन्दित स्वर में पूछा, "बाबूजी, तुमने दादा को मारा है?"

सुव्रत स्तब्ध रह गया। गोद का यह लड़का कह क्या रहा है!

सुव्रत बोला, "छिः, मारूंगा क्यों ? थोड़ा डांटा जरूर है।"

पिण्टू बोला, "मैं भी आपको डांटूं ?"

बच्चे को गोद में उठा पूरब तरफ की खिड़की के पास वह आ खड़ा हुआ। यहां खड़े होने पर, रास्ते के उस पार तट का दृश्य नजर आता है। यह कोई बहुत नयनाभिराम दृश्य नहीं है। माल से लदी हुई एक नौका तट पर लगी हुई है। धुआं उठ रहा है। लगता है, मल्लाह भीतर खाना पका रहे हैं। देखते ही देखते अपने बचपन की स्मृति उभर आई। अस्पष्ट, धुंधलके में सुव्रत को लगा, कभी वह भी अपने पिता की गोद में खिड़की से बाहर की दुनिया देखा करता था।

तट नहीं, स्रोतस्विनी नदी थी घर के पश्चिम में। बीच में बांसों का झुरमुट। इस झुरमुट के बीच से ही पिता ने एक बार एक जहाज दिखलाया था। रंगीन चमचमाता जहाज, उत्तर से दक्षिण की ओर 'सों-सों' करता हुआ चला गया। सुव्रत को जैसे यह सारा दृश्य याद है। पिता के कन्धे पर चढ़कर उसने एक बार नौका-दौड़ देखी है। उस समय उसके सिर पर घुघराले बाल थे, बाल-सुलभ सौन्दर्य था और मोती-से चमकते दांत थे। आज वे सब नहीं रहे।

एकाएक अपने वृद्ध पिता के लिए उसके मन में बड़ी करुणा आई। वे अपनी शिक्षा-दीक्षा के संस्कार, दीन-दुनिया के सम्बन्ध में अपने विचारों को एकाएक कैसे छोड़ देंगे ? इतनी कड़ी बात कहना सुपुत्र के लिए उचित नहीं था। थोड़ा समझा-बुझाकर, मीठे स्वर में बोलने से भी काम चल जाता।

लेकिन पिण्टू पिता को अपने पिता के बारे में सोचने का अवसर देना नहीं चाहता। वह प्रश्न पर प्रश्न किए जा रहा है :

"नाव किस चीज की बनी है, बाबूजी ?"

"इसके भीतर क्या है ?"

"मांभी इसके भीतर क्या कर रहे हैं ?"

"खाना पका रहे हैं !"

"खाने मे क्या पका रहे हैं ?"

उसके कुतूहलों की सीमा नहीं।

नीला कुछ देर बाद घर के दरवाजे के पास आकर बोली, "भैया, मुंह-हाथ धोकर कुछ खाओगे, या अभी केवल चाय लोगे ?"

सुव्रत बोला, "जो है लाओ। नन्नू-मन्नू कहां हैं ?"

नीला बोली, "वे दूसरे कमरे में पढ़ रहे हैं।"

सुव्रत बोला, "उनसे ऊंची आवाज में पढ़ने को कहो। मन ही मन पढ़ने से सबक याद नहीं होता।"

पिण्टू बोला, 'बाबूजी, मैं बुआ के पास जाऊंगा।"

पिता की गोद से उतरकर पिण्टू बुआ की गोद में चला गया।

सुव्रत ने देखा, बाहर से आकर नीला ने पिण्टू को चूमा।

अभाव, खींचतान, अच्छे-बुरे का मतभेद, इन सबके बीच परिवार के सदस्यों का यह प्रीति-स्नेह, प्रेम, इसकी कोई तुलना नहीं है।

सुव्रत मन ही मन जानता है कि उसके तीनों भाई-बहन भारती को खूब चाहते हैं, पिण्टू को तो प्यार करते ही हैं, सुव्रत के प्रति भी कम श्रद्धा नहीं रखते। उन्हें पता है कि पिताजी अपनी सामर्थ्य खो चुके हैं। सुव्रत ही घर का मालिक है। फिर भी—जब कभी मां-बाप के साथ सुव्रत का झगड़ा होता है, वे मन ही मन मां-बाप का ही पक्ष लेते हैं, सुव्रत का नहीं। मां-बाप भी समर्थ बड़े लड़के की अपेक्षा नाबालिग छोटे भाई-बहनों को अधिक चाहते हैं। जो असहाय और दुर्बल हैं, भीतर ही भीतर, जैसे उनमें आपस में कोई मेल है। खून के रिश्ते के अलावा और एक समान-हित का रिश्ता उन्हें एक-दूसरे के अधिक निकट ला देता है।

१५

उस दिन कुछ अधिक देर से ही आरती घर लौटी। आफिस की साड़ी बदलने बाथरूम में घुसी। कमरे में बैठे-बैठे ही बाथरूम से पानी गिरने की आवाज वह सुनने लगा।

कमरे में आकर आरती बोली, "बात क्या है ? इतने गंभीर क्यों हो ? सुना, आज फिर झगड़ा हुआ है···?"

सुव्रत ने पूछा, "किसके मुंह से सुना ?"

आरती हंसकर बोली, "बस, सुना है। मेरे जासूसों की कोई कमी है ! मेरे पीछे क्या होता है, कौन क्या कहता है···सभी कुछ मेरे कान में पहुंच जाता है।"

सुव्रत ने कहा, "हूं···"

"तुम्हें तो पता ही है, दोस्तों के साथ अड्डा जमा रही थी ! कलकत्ता शहर में मौज-मजे के लिए जगहों की कोई कमी है ! थियेटर हैं, सिनेमा हैं···"

सुव्रत ने गंभीर स्वर में टोका, "होटल-रेस्तरां भी तो हैं।"

आरती हंसकर बोली, "हां, वे तो है ही ! इन सारी जगहों से तुमने ही तो मेरा परिचय कराया है। अब मैं इन जगहों से दूसरों को परिचय कराती हूं।"

अत्यन्त कौतुक-भरी मुद्रा में आरती अपने पति के समीप आ गई। बाहर का दरवाजा बन्द कर दिया गया है। उसके बाहर नीले रंग का परदा झूल रहा है। कोई नहीं आ सकता। पहले इस घर में इस तरह के पर्दे-वर्दे की व्यवस्था नहीं थी। आरती ने ही यह सब किया है। अपना घूंघट उतारकर घर के दरवाजे पर घूंघट लगा दिया है।

आरती पति के पास बैठती हुई बोली, "जानते हो, सोचने में बड़ा

मजा आता है ! तुम लोग मुझे लेकर जाने क्या-क्या सोचते हो, कितने ताने-बाने बुनते हो ! और इधर मैं अपना काम करती जाती हूं। पता है, आज मैंने दो मशीनों की बिक्री की है। कमीशन के पैसे घर आएंगे।"

सुव्रत ने गौर किया—लम्बी छरहरी आरती मानो देखने में और सुन्दर हो गई है, मानो उसकी उम्र घट गई है, उल्लास-आनन्द से जैसे वह परिपूर्ण हो उठी है। लेकिन इतनी खुशी किसलिए ! मशीन-बिक्री से कमीशन के रुपये घर आएंगे, सिर्फ इसीलिए ? या इसके मूल में और कोई बात है ? आशंका का कांटा सुव्रत के मन में चुभने लगा।

सुव्रत ने पूछा, "तुम यह कहना चाहती हो कि सिर्फ काम के चलते ही तुम इधर-उधर घूमती रहती हो ?"

आरती बोली, "तब और, किसलिए ?"

सुव्रत ने पूछा, "चौरंगी के रेस्तरां में आज किसलिए गई थी ?"

आरती हंसकर बोली, "ओ मां ! यह बात भी तुम्हारे कानों तक पहुंच चुकी है ! मैंने जिस तरह घर में कुछ जासूस रख छोड़े हैं, लगता है, कलकत्ता-भर में तुमने भी अपने जासूस लगा दिए हैं !"

सुव्रत ने कहा, "हंसी की बात नहीं है, आरती ! तुम वहां क्यों गई थी ?"

आरती बोली, "शैलेन भैया ले गए। किसी तरह नहीं माने। मेरी दीदी के मौसेरे देवर हैं। काफी उम्र के हैं। तुमसे काफी बड़े हैं। विवाह नहीं किया। अब लगता है, मन ही मन पछता रहे हैं। 'क्यों नहीं किया' जैसे पश्चात्ताप की छाप। मुझे देखते ही जबर्दस्ती ले गए। बोले, 'आओ, कुछ खा लो।' मैंने सोचा, हर्ज ही क्या है किसीको अगर खिलाने में खुशी मिलती है ! कोई मशीन बेचकर खुश है। शैलेन भैया ने मुझे दो खरीददार भी जुटा दिए। खुद भी एक मशीन खरीदी है।"

सुव्रत चुप रह गया। इसी प्रकार आहिस्ते-आहिस्ते, स्वभाव से,

आचरण में शिथिलता आती है। अपने बड़े दोषों को भी आदमी छोटा बनाकर देखने लगता है। अपराध को अपराध नहीं समझता।

पिण्टू अपनी दादी के पास सोता है। आरती सब काम समेटकर अपने कमरे में आई। सोने के पहले आईने के सामने सौन्दर्य-रक्षा के लिए कुछ प्रसाधन लगाए। सुब्रत ने सोचा, ये सारी चीजें निश्चय ही आरती ने आफिस से सीखी होंगी।

बत्ती बुझाकर आरती बिछावन पर आई। सुब्रत इस अवसर के लिए बाट जोह रहा था। उसने हल्के स्वर में समझाना शुरू किया।

आरती यह न समझे कि इन विषयों में वह कोई दकियानूस है—या आरती का लोगों से बाहर मिलना-जुलना नापसन्द है। किन्तु जिस समाज में वह रहता है, उसका भी ध्यान रखना होगा। आदमी समाज को छोड़कर तो रह नहीं सकता। आरती अवश्य ही सरल सहज भाव से लोगों से मिलती है। उसके काम में उन्नति हो, दो पैसे अधिक घर में आएं, आरती का यही उद्देश्य है। सुब्रत इस बात को जानता है, लेकिन और लोग तो इस बात का विश्वास नहीं भी कर सकते हैं और इधर पारिवारिक शान्ति भी बनाए रखना जरूरी है। वह बूढ़े मां-बाप को कहीं फेंक नहीं सकता। भाई-बहन भी उसे छोड़कर कहां जाएंगे? और रोज ही इस बात को लेकर किच-किच, हाय-तोबा मचता रहे, यह भी ठीक नहीं है। इसलिए सब तरह से सोच-विचारकर सुब्रत इस नतीजे पर पहुंचा है कि आरती का नौकरी छोड़ देना ही ठीक रहेगा। वह उसे घर में बैठने के लिए नहीं कहता। मशीन का प्रयोग सिखलाने या मशीन-बिक्री के अलावा भी कलकत्ता शहर में दूसरी नौकरियों की कमी नहीं है। आरती किसी स्कूल में अध्यापिका का काम कर सकती है। अपने दोस्तों की मदद से किसी आफिस में भी वह उसके लिए कोई नौकरी दिलवा सकता है—ऐसी नौकरी जिसमें बाहर घूमना नहीं पड़े, आफिस

की चारदीवारी में बैठकर काम किया जा सके। टेबल-कुर्सी के साथ बिजली पंखे के नीचे बैठकर निर्धारित समय के बीच काम करना महिलाओं के लिए सम्मानजनक और निरापद काम है। वह भारती के लिए ऐसे ही किसी काम का इन्तजाम करेगा।

"क्या कहती हो यही ठीक है न ?"

किन्तु अपनी पत्नी की ओर से उसे कोई उत्तर नहीं मिला। भारती क्या इसी बीच सो गई ? आश्चर्य है, इतनी गंभीर बात को वह कोई महत्त्व नहीं दे रही ! सुव्रत ने अपने को बहुत ही अपमानित महसूस किया। इस तरह, एक प्रकार से जिद्दी औरत के साथ कैसे गुजारा किया जा सकता है ? जो किसी सही तर्क या विचार को नहीं मानती, सिर्फ अपनी धारणा को ही ठीक समझती है—ऐसी नासमझ, भविष्य के परिणाम से बेखबर पत्नी को वह सही रास्ते पर कैसे लाए ? सुव्रत लेटे-लेटे यही बात सोचता रहा।

किन्तु कुछ ही क्षण पश्चात्, अत्यन्त परिचित दो कोमल भुजाओं ने उसके गले को घेर लिया।

"भाषण समाप्त हो गया ? इधर घूमकर सोओ।"

हल्की, मीठी मुस्कराहट से भारती का चेहरा भर उठा।

१६

बैंक छोटा है। वेतन भी कम है। किन्तु सुव्रत को मेहनत कम नहीं करनी पड़ती। लगभग सभी तरह के काम उसके जिम्मे आ जाते हैं। बहुत ही सावधानी बरतनी होती है। लेजर, लोन, ड्राफ्ट, क्लियरिंग—सभीका उत्तरदायित्व उसपर है। मैनेजर नया है। काम अभी पूरा समझ नहीं पाया है। जल्दी-जल्दी बुला भेजता है। बड़े झमेले का काम है। इतनी व्यस्तता के बावजूद बीच-बीच में जाने क्यों अन्यमनस्क हो उठता है सुव्रत। अच्छा नहीं लगता, चैन नहीं। दाम्पत्य जीवन में कहीं कोई दरार पड़ गई है। आरती ने मानो कसम खा ली है कि वह मन-मानी करेगी। वह जैसे भूल गई है कि दाम्पत्य-जीवन में एक को दूसरे पर निर्भर करना पड़ता है—यही अलिखित सूत्र है—सुख-शान्ति की मूल भित्ति! किन्तु आरती ने जो नई आजादी पाई है, उसका पूरा भोग किए बिना मानो उसे चैन नहीं। स्वावलम्बिता को क्या वह स्वेच्छाचारिता की सीमा तक ले जाएगी? कोई रुकावट नहीं मानेगी? कोई अनुशासन स्वीकार नहीं करेगी? उसके अनुरोध तक की उपेक्षा कर देगी?

आजकल छुट्टी के बाद आरती से भेंट नहीं होती। वह अपने काम को लेकर व्यस्त रहती है। कम्पनी ने उसके ऊपर कैसा भारी उत्तरदायित्व सौंप दिया है। पति-रूपी परम गुरु भी इसके आगे छोटा हो गया है।

दो दिन टेलिफोन करने पर भी सुव्रत आरती को नहीं पा सका। एक पुरुष-कंठ ने उत्तर दिया है, "मिसेज मजूमदार तो अभी नहीं हैं। वे बाहर निकल गई हैं। कुछ कहना है?"

"नहीं।" कहकर सुव्रत ने फोन रख दिया।

क्लियरिंग शाखा में काम करनेवाले परेश दत्त उसके आफिस के

पुराने सहकर्मी हैं। मोटा-मोटा, गोल-गोल चेहरा। स्वास्थ्य को बनाए हुए है। टिफिन के समय अपना टिफिन-बक्स खोल सुव्रत के आगे बढ़ाकर कहते हैं, "आइए, भैया···"

उम्र में काफी बड़े हैं परेश बाबू। चालीस तो कभी के पार कर चुके हैं। फिर भी अपने से बारह-तेरह वर्ष छोटे सुव्रत को 'बड़े भाई' कहकर पुकारते हैं।

सुव्रत ने कहा, "आप खाइए···"

परेश बाबू बोले, "अरे भाई, मैं तो खाऊंगा ही। पत्नी ने आते समय इतना सब थमा दिया। बिना खाए कोई उपाय है? सिर की सौगंध जो दे रखी है!"

सुव्रत हंसा, "अच्छा, यह बात है!"

परेश बाबू ने पूड़ी और आलूदम का हिस्सा सुव्रत की ओर बढ़ाया। खाते-खाते बोले, "आप टिफिन-विफिन नहीं लाते?"

सुव्रत बोला, "नहीं, पहले लाता था। अब वह सब···"

परेश बाबू बोले, "किसीसे सुना, मिसेज मजूमदार ने नौकरी कर ली है? यह ठीक खबर है?"

सुव्रत ने संक्षेप में उत्तर दिया, "हां···"

परेश बाबू बोले, "फिर वे घर-गृहस्थी देखने का समय कहां पाती होंगी? घर के 'बॉस' को देखना—साथ ही आफिस के 'बॉस' को देखना—एकसाथ दोनों संभव कैसे है?" हंसने लगे परेश बाबू।

कुछ देर बाद हंसना बन्द कर बोले, "बुरा तो नहीं मान गए भैया? चाहे जो कहिए, आप हैं भाग्यवान! आजकल एक आदमी के कमाने से क्या बाल-बच्चों का खर्च चल सकता है? कितनी मुश्किल से घर चलता है, यह मैं ही जानता हूं। महीने के पन्द्रह दिन खतम होते न होते हाथ बिलकुल खाली हो जाता है। यदि एक और हाथ कमानेवाला हो और

बाहर से कुछ आता रहे, तब बहुत ही राहत मिलती है, भैया !"

सुव्रत ने इसका कोई उत्तर न देकर एक सिगरेट सहकर्मी की ओर बढ़ाकर, दूसरी स्वयं सुलगा ली।

१७

इसके बाद एक दिन आफिस से निकल पड़ा सुव्रत। सहकर्मी निरंजन के जिम्मे काम सौंपकर, बैंक बन्द होने से पहले कैनिंग स्ट्रीट में आरती के आफिस जा पहुंचा। आजकल करते-करते वह वहां जा नहीं पाता था। किन्तु संकोच के आगे कुतूहल हार मानता रहा है। पत्नी के आफिस में जाकर अपना परिचय देना होगा—'मैं अमुक श्रीमती··· का पति हूं।' दूसरे को यह चाहे जैसा लगे, अपने मुंह से कहा जाना अजीब लगता है!

अन्त में सुव्रत को ऐसा महसूस हुआ कि एक बार हिमांशु बाबू से उसका मिलना जरूरी है। उन्हें बतलाना होगा कि बहाली के समय जो शर्तें थी, उनका वे पूरी तरह पालन नहीं कर रहे हैं यानी सोलह आने के बदले अठारह आने वसूल रहे हैं। उसकी पत्नी को अधिक देर तक रोके रखते हैं, मेहनत भी अधिक करवाते हैं। इस सम्बन्ध में उनसे एक बार स्पष्ट बात करना आवश्यक है।

आफिस बन्द होने के घंटा भर पहले सुव्रत निकल पड़ा कैनिंग-

स्ट्रीट—'मुखर्जी एण्ड मुखर्जी' की ओर।

नीचे तल्ले में स्टेशनरी की दुकान है। वहां दो पारिचित बंगाली लड़कियां काम कर रही हैं। खरीदारों की भीड़ है। और उम्र के दो कर्मचारी एक ओर काम कर रहे हैं, दूसरी ओर काउण्टर के पास एक बूढ़े कैशियर बैठे हैं। यहां भी भारती नहीं है। यह संयोग ही था कि भारती के साथ यहां देखा-देखी नहीं हुई। हिमांशु मुखर्जी का नाम लेते ही दरबान उसे दोतल्ले पर ले गया। मेज-कुर्सी, पंखा, फोन सब तरह से सुसज्जित आफिस है। चार-पांच व्यक्ति सिर झुकाए काम कर रहे हैं। यहां भी भारती नहीं है।

नाम लिखकर स्लिप भेजते ही सादर बुलाहट हुई। हिमांशु बाबू स्वयं उठकर उसे अपने कमरे में ले गए।

सुब्रत ने चकित होकर पूछा, "क्या आप मुझे पहचानते हैं?"

हिमांशु बाबू मुस्कराए, "पहचान क्यों नहीं सकूंगा? मिसेज मजूमदार की दफ्तरी चिट्ठियां तो आप ही के केयर-आफ आती हैं। आपका नेम मैं नहीं भूलता। इसके अलावा, दूर से एक दिन आपको दिखलाया था मिसेज मजूमदार ने। उनसे मैंने कई बार आपको यहां लाने के लिए कहा था। लेकिन लगता है, आपको समय नहीं मिला। शायद उन्हें भी संकोच हो।"

सुब्रत बोला, "नहीं-नहीं, इसमें संकोच की क्या बात है?"

"सचमुच कोई बात नहीं। हम भी पूर्वी बंगाल के हैं—संकोच-संकोच में विश्वास नहीं रखते। अपनी तरफ के आदमी को पाकर दिल खोलकर बातें करते हैं।"

सुब्रत को खुशी हुई, "तो आप भी पूर्वी बंगाल के हैं? किस जिले के?"

सिगरेट बढ़ाते हुए हिमांशु बाबू मुस्कराए, "ढाका के। आप लोगों का

घर भी मुंशीगंज सब-डिविजन में है, मैं सब सुन चुका हूं।"

माचिस जलाकर उन्होंने पहले सुब्रत की सिगरेट सुलगा दी, इसके बाद अपनी। सचमुच, काफी स्वस्थ, लम्बे-चौड़े व्यक्तित्व के आदमी हैं। महीन धोती और मलमल के कुर्ते में काफी अच्छे लगते हैं। चौड़ा माथा है, बड़ी-बड़ी आंखें हैं, भरे-भरे गाल हैं। हिमांशु बाबू ने ऐश-ट्रे में सिगरेट की राख झाड़ी। सुब्रत ने गौर किया, हाथ की दोनों उंगलियों में हीरे की अंगूठियां चमक रही हैं।

हिमांशु बाबू ने एक बार फिर आत्म-परिचय दिया, "सब बंगाल है भाई! चिन्ता की कोई बात नहीं। सारे बंगाल में हम छा गए हैं। पाकिस्तान से अपने व्यवसाय का बारह आना हिस्सा यहां ले आए। हाथ-पैर समेटकर तो बैठा नहीं जा सकता। सोचा, किस्मत आजमाकर देखें! और मैं कूद पड़ा। किस्मत आजमाने में हम, यानी पूर्वी बंगाल के लोग कभी पीछे नहीं रहे हैं। पूर्वी बंगाल के लोगों के अलावा कौन महिलाओं को इतने अवसर प्रदान करेगा? यदि आप भी पूर्वी बंगाल के नहीं होते तब क्या इतने सहज रूप से अपनी पत्नी को नौकरी करने के लिए भेज सकते?"

एकाएक रुक गए हिमांशु बाबू। सिगरेट की राख झाड़ मुस्कराते बोले, "लेकिन अभी थोड़ा इन्तजार करना होगा आपको सुब्रत बाबू! मिसेज मजूमदार बऊ-बाजार की तरफ गई हैं।"

हाथ-घड़ी की ओर देखकर बोले, "पांच-सात मिनटों के बाद वे लौट आएंगी।"

सुब्रत ने इस बार प्रश्न किया, "लगता है, आपके यहां आउट-डोर काम ही अधिक है।"

हिमांशु बाबू स्निग्ध, सौजन्य-भरी मुस्कराहट के साथ बोले, "हां, कुछ अधिक है। नई तरह की मशीन है। पहले इसे बेचने के लिए विशेष

प्रयत्न करना होगा। फिर चालू हो जाने पर—एक बात जरूर है कि हम सिर्फ कैनवास करने के लिए महिलाओं को बाहर नहीं भेजते। वे डिमांस्ट्रेट करती हैं, किस तरह से मशीन का इस्तेमाल करना चाहिए, यह सिखाती हैं। इस काम में मिसेज मजूमदार काफी तेज साबित हुई हैं। जिन-जिन खरीददारों के यहां वे गई हैं, वहां से हमें काफी अच्छी रिपोर्टें मिली हैं। जिस परिवार में वे एक बार गईं, वहां दूसरी महिला को भेजना संभव नहीं होता। पार्टी को दूसरी महिला पसन्द नहीं होती। वे मीन-मेख निकालते हैं। अपनी बातचीत, अपने काम से पार्टी को खुश रखती हैं।"

बैठे-बैठे अपनी पत्नी की प्रशंसा सुनता रहा सुव्रत। एक दूसरे पुरुष से अपनी पत्नी की प्रशंसा! नौकरी के लिए यदि वह अपनी पत्नी को नहीं भेजता तब शायद उसके ये सारे गुण हमेशा के लिए छिपे रहते!

चाय आई। इसीके साथ देश की राजनीतिक, आर्थिक दशा की आलोचना हुई। हिमांशु बाबू बोले, "व्यापार में अब काफी दिक्कतें आ गई हैं। दिन-ब-दिन बाजार का हाल खस्ता होता जा रहा है। ढाका, नारायणगंज से भी इसी तरह की खबरें आ रही हैं।"

सुव्रत को अपनी शिकायत उठाने का अवसर ही नहीं मिला। और फिर इसे उठाना बेमानी लगा।

कुछ ही समय बाद सचमुच ही आरती आ उपस्थित हुई। पीछे-पीछे आफिस का एक चपरासी छींट के कपड़े से ढंका एक लम्बा यंत्र लेता आया—देखने में सितार जैसा। लेकिन यह वाद्य-यंत्र नहीं, बुनाई की मशीन थी।

पति को यहां देखकर आरती थोड़ी भकचका गई। सुव्रत भी नहीं सोच सका कि क्या कहे।

किन्तु हिमांशु बाबू में भरपूर मात्रा में सहज ज्ञान है। हंसकर बोले, "आइए मिसेज मजूमदार, हमारे यहां एक नये खरीददार आए हैं।"

आरती ने किंचित् लजाते हुए पूछा, "कब आए ?"

"यही कुछ देर पहले।"

सुव्रत को हठात् ऐसे ही एक दिन की घटना याद आ गई। विवाह के लगभग एक साल बाद आरती के कालेज के दिनों का कोई मित्र उससे मिलने आया था। बहुत ही संकोची और विनम्र-सा वह लड़का था। उसका नाम शायद पुलिन था। कुछ भय और कुछ ईर्ष्या की दृष्टि से उसने सुव्रत की ओर देखा था। सुव्रत मुंह फेरकर मुस्कराया था। इसके बाद आरती के कमरे में घुसते ही प्रायः इसी अंदाज में बोला था, 'आओ आरती, देखो कौन मिलने आए हैं, पहचान रही हो न ?'

उस दिन आरती और पुलिन—किसीके मुंह से कोई शब्द नहीं निकल सका था। लेकिन हिमांशु बाबू और आरती का सम्बन्ध तो बिलकुल दूसरी तरह का है। हिमांशु बाबू उसके प्रेम के प्रतिद्वन्द्वी नहीं, उसकी पत्नी के श्रम के भागीदार हैं। एक सौ रुपये देकर इन्होंने आरती के श्रम और सामर्थ्य का अधिक भाग खरीद लिया है। इसी कारण पत्नी से उसे पर्याप्त सेवा नहीं मिल पाती। यहां उसकी अवस्था उस पुलिन के समान ही है! सुव्रत ने सोचकर देखा—जब तक आरती हिमांशु बाबू के यहां नौकरी करती है तब तक 'पति' होने का सोलह आना दावा करना बेकार है। आरती का शरीर-मन उसका है; लेकिन शरीर के श्रम का दस आना मालिक तो हिमांशु मुखर्जी हैं!

इसके बाद सुव्रत के सामने ही हिमांशु बाबू ने आरती से आफिस-सम्बन्धी बातचीत शुरू कर दी। ठीक उसी तरह जिस तरह पुलिन के सामने आरती के साथ घर-गृहस्थी की बातें करने लगा था, सुव्रत पूछा था, 'बाजार से क्या-क्या लाना होगा ? बाबूजी के लिए क्या आज ही

डाक्टर बुलाना होगा···?'

हिमांशु बाबू उसी तरह बोलने लगे, "मल्लिक परिवार में और एक दिन जाना पड़ेगा आपको। हां, श्याम बाजार से और जो तीन ऑर्डर मिलने वाले थे···"

कुछ समय बाद 'नमस्कार' कर विदा लेने के लिए उठ खड़ा हुआ सुव्रत। जो बात वह कहने आया था, हिमांशु बाबू ने उसे दूसरी भाषा में बतला दिया, "आते रहेंगे कभी-कभी। बहुत खुशी होगी आपसे मिलकर। किसी दिन श्रीमती के साथ आइए न, एकडलिया रोड के मेरे मकान पर। मेरी पत्नी बहुत ही खुश होंगी।"

यह तो हुई भूमिका। इसके बाद हिमांशु बाबू ने सुव्रत के दुःख में स्वयं सहानुभूति प्रकट की, "मिसेज मजूमदार कुछ कहती नहीं, फिर भी मैं सब समझता हूं। बाल-बच्चों वाली गृहस्थी है। इतनी देर तक रुके रहने पर तकलीफ तो होती ही होगी। मैं भी तो एक गृहस्थ हूं — मेरे भी घर-परिवार हैं। लेकिन समझकर भी क्या कर सकता हूं, आप ही कहिए? मिल-जुलकर, परिश्रम कर पहले 'बिजनेस' को ठीक करना होगा। जिस तरह का समय आ गया है और बाजार की जैसी हालत है, सब तो आप देख रहे हैं। इतने बड़े कारोबार के बाद कुछ भी समय नहीं बचता भाई···"

-सुव्रत खड़ा हो गया और 'विदा' के लिए नमस्कार करता बोला, "अब चलता [redacted] हिमांशु बाबू, आपसे मिलकर बड़ी प्रसन्नता हुई।"

हिमांशु बाबू बोले, "यह तो दोनों तरफ की बात है, भाई! मैं तो सोचता भी नहीं था कि आप कभी यहां पधारेंगे। मिसेज मजूमदार को कितनी बार कहा आपको लाने के लिए! अच्छा तो एक काम करें। आप मेरी गाड़ी से चले जाइए—ड्राइवर आपको पहुंचा आएगा।"

सुव्रत चौंककर बोला, "नहीं, नहीं, मैं ऐसे ही चला जाऊंगा।"

हिमांशु बाबू हंसकर बोले, "मैं क्या कहता हूं कि आप नहीं जा सकेंगे ! जा सकेंगे लेकिन बहुत तकलीफ होगी। इस समय ट्राम या बस में चढ़ना काफी मुश्किल होता है। अच्छा, तो एक काम कीजिए। मिसेज मजूमदार को भी साथ लेते जाइए। अब तो इनका समय लगभग समाप्त हो चुका है। जो काम बचा है, वह कल आकर कर लेंगी। क्या कहती हैं—जाएंगी न मिसेज मजूमदार···?"

सुव्रत ने मन ही मन सोचा—सौजन्य की मूर्ति हैं ! यदि हमारी भी हालत अच्छी रहती तब हम भी ऐसा सौजन्य दिखा सकते थे।

हिमांशु बाबू की दक्षिणा सुव्रत ने स्वीकार नहीं की। आरती भी चुप रह गई। सुव्रत के साथ लौटने को राजी नहीं हुई।

१८

रात में घर लौटने पर पति-पत्नी में हिमांशु बाबू को लेकर कुछ देर तक बातचीत चली।

आरती ने पूछा, "कैसे लगे हिमांशु बाबू ?"

सुव्रत बोला, "तुम्हारे 'बॉस' ?"

आरती बोली, "बॉस-वॉस क्यों कह रहे हो ?"

सुव्रत ने कहा, "तब 'तुम्हारा मित्र' कहूं ? या 'प्रभु' कहूं ?"

आरती बोली, "हटो, तुम्हारे साथ तो बात करना मुश्किल है।"

सुव्रत ने खिझाने के स्वर में कहा, "यह कहो कि बात करने की इच्छा नहीं है।"

भारती बोली, "चाहे जो कहो, हिमांशु बाबू एक समर्थ पुरुष हैं, इसे तो मानना ही होगा।"

सुव्रत बोला, "हां, समर्थ तो हैं ही।"

भारती ने कहा, "सुना है, बहुत ही साधारण हालत से 'स्ट्रगल' कर वे बड़े आदमी बने हैं।"

ईर्ष्या की एक चुभन मन में हुई। इलिप की हंसी में यह ईर्ष्या उत्तर बनकर आई, "बहुत बड़े आदमी हो गए हैं शायद!"

भारती बोली, "ओहो,—हम लोगों से तो बड़े हैं ही—बहुत बड़े। गाड़ी है, घर है! बिजनेस के अलावा और दूसरी तरह से इतना बड़ा नहीं हुआ जा सकता।"

"हां, वही तो देख रहा हूं।" गंभीर स्वर में सुव्रत ने कहा और करवट बदल ली।

किसीने कुछ क्षणों तक फिर कोई बातचीत नहीं की। इसके बाद भारती पति की पीठ से सटकर लेट गई। फिर भी सुव्रत हिला-डोला नहीं। भारती खिलखिला पड़ी।

सुव्रत ने खीझते हुए पूछा, "हंस क्यों रही हो?"

भारती बोली, "बाप रे! तुम कितने ईर्ष्यालु हो—बिल्कुल पिण्टू की तरह! हिमांशु बाबू की थोड़ी तारीफ करते ही तुम्हें ईर्ष्या होने लगी!"

सुव्रत बोला, "इसमें ईर्ष्या की क्या बात है? औरतों की नजर में हर पराया मर्द खूबसूरत और बहादुर लगता है—यह तो मानी हुई बात है।"

भारती ने उत्तर दिया, "अगर तुम ऐसा सोचते हो, तब मैं भी

कहूंगी कि तुम मर्दों की नजर भी उससे कम नहीं है। तुम लोगों की नजर में भी हर दूसरी औरत हूर की परी है!"

सुव्रत बोला, "इसीलिए तो डर लगता है। दोनों ने एक-दूसरे को किस नजर से देखा है, कौन जाने ?"

हंसी-मजाक के बीच तो वह बात वहीं खत्म हो गई। किन्तु पत्नी को बाहर भटकने वाली इस नौकरी से छुड़ाना होगा—सुव्रत के मन में यह संकल्प बैठ गया। यदि आरती की अपनी जिद है तब वह अपनी ही जिद क्यों छोड़े ?

किन्तु अचानक उससे नौकरी छुड़ा देने पर घर की आमदनी घट जाएगी—बहुत-सी मदों में कटौती करनी होगी। इसलिए अपनी आमदनी बढ़ाने की दिशा में वह लग गया। बहुत ढूंढ़ने पर—कालेज स्ट्रीट में 'बोस ब्रदर्स परफ्यूमरी' फर्म में पार्ट-टाइम का एक काम मिला। शाम के बाद एक-दो घंटे उनके हिसाब के कागज वह देख दिया करेगा। अभी इस काम के लिए उसे साठ रुपये मिलेंगे। बाद में रकम बढ़ाने का भरोसा दिया गया है।

आफिस के बाद इसीलिए सुव्रत इसी 'सुगन्ध भंडार' में जाने लगा।

यह जानकर सरोजिनीदेवी बिगड़ने लगीं, "एक आफिस के काम के बाद दूसरे आफिस का काम। इतनी खटान क्या ठीक है ? इस खटान के कारण देह यदि गिर जाए, तब क्या करोगे ?"

सुव्रत बोला, "तुम चिन्ता मत करो मां, इतनी आसानी से यह देह टूट नहीं जाएगी।"

सरोजिनीदेवी बोलीं, "हां, नहीं टूटेगी! तुम्हारा शरीर रक्त-मांस से थोड़ बना है—वह तो लोहे से बना है! जरूरत नहीं है बेटे, दूध-मछली की! हम सब साग-भात खाएंगे—तुम स्वस्थ बने रहो।"

सुव्रत हंसकर बोला, "यह सब एक गोरख धन्धा है, मां! साग-

भात खाकर स्वस्थ नहीं रहा जा सकता। और इधर, मछली-भात जुटाने में जान निकल जाती है!"

सरोजिनीदेवी भिड़ककर बोलीं, "तुम हंसो मत भोम्बल, तुम्हारी हंसी देखकर देह जल जाती है।"

अपने पति को भी सरोजिनीदेवी नहीं छोड़तीं, "हाथ पर हाथ धरकर बैठे हो! इधर लड़का खटते-खटते मरा जा रहा है! तुम्हारा तो इस तरफ कुछ ध्यान ही नहीं!"

प्रियगोपाल उत्तर देते, "क्या करूं, तुम्हीं कहो! आज क्या लोग मुझे पूछते भी हैं! जिसके पास जाता हूं—'बूढ़े कमजोर आदमी' कहकर टरका देते हैं। फिर भी इस उम्र में जो बची-खुची शक्ति थी—उसे रात-दिन की तुम्हारी 'किचकिच' ने खत्म कर दिया है।"

सरोजिनीदेवी रोष से कहतीं, "हां, सारा दोष तो मेरा है! तुम क्या दांत नहीं किटकिटाते?"

प्रियगोपाल कहते, "हे भगवान! दांत किटकिटाने के लिए मेरे कितने दांत बचे हैं, गिनकर देख लो!"

सरोजिनीदेवी का उत्तर था, "मुझे क्या गरज पड़ी है तुम्हारे दांत गिनने की! और फिर तुम्हारा मुंह भी बहुत साफ रहता है! क्या ही अच्छा होता, बात करते समय यदि तुम्हारे मुंह से 'भक-भक' गन्ध नहीं आती! दांतों की जरूरत क्या है, तुम्हारे पास दो जबड़े तो हैं! तुम उन्हीं जबड़ों से मेरे हाड़-मास चबा डालो!"

प्रियगोपाल दुःखी स्वर में कहते, "हे भगवान! इस संसार में कौन किसको चबा रहा है—जिनके पास आंखें हैं, वे देख रहे हैं।"

अपने जीवन की अशान्ति से ही सुव्रत बेचैन है। इसपर मां-बाप के झगड़े तो बर्दाश्त के बाहर हैं। मां को डपटते हुए सुव्रत बोला, "तुम चुप भी करो, मां! तुम लोगों का रात-दिन का झगड़ना अच्छा नहीं लगता।

सरोजिनीदेवी बोलीं, "झगड़ा क्या सिर्फ मेरे कारण होता है, बेटे ?"

सुव्रत चुप रह गया। मां का इशारा बिलकुल साफ है। सचमुच झगड़े तो उनके बीच भी होते हैं। होते ही नहीं, लगे रहते हैं। सिर्फ उनकी भाषा अलग है, भंगिमा दूसरी है। दो पीढ़ियों के पती-पत्नी एक ही घर में हैं। उनका रहन-सहन, बोलने-चालने का ढंग—जीवन-प्रक्रिया भिन्न है।

सुव्रत को पहले ऐसा लगता था—मां-बाप की अपेक्षा उसका और आरती का विवाहित जीवन अधिक सुखी है। वे अधिक समझदार हैं। वे ही एक-दूसरे को अधिक प्यार करते हैं। लेकिन आज उस बात को उसी रूप में नहीं सोच पाता सुव्रत। अनुरोध, आग्रह, किसी बात से भी आरती नहीं पिघलती। वह अपनी जिद को जितना अधिक चाहती है, शायद पति को भी नहीं चाहती। उसके लिए उसकी इच्छा, स्वच्छन्दता ही महत्त्वपूर्ण है; सुव्रत की पसन्दगी-नापसन्दगी, सुख-सुविधा की बात नगण्य है।

१९

फिर एक दिन अपनी पत्नी से सुव्रत की मुठभेड़ हो गई। बोला, "तुमने क्या सोचा है ?"

भारती बोली, "और क्या सोचूगी ? मेरे पास क्या विद्या-बुद्धि है जो सोचूगी ! सोचने के मालिक तो तुम हो।"

सुव्रत बोला, "मैंने तो एक की जगह दो नौकरियां कर ली। अब मैं तुम्हारी नौकरी करने की जरूरत नहीं समझता।"

भारती ने जवाब दिया, "तुम्हें पार्ट-टाइम नौकरी करने की जरूरत नहीं थी। इतनी मेहनत शरीर बर्दाश्त नहीं करेगी। लेकिन तुम क्या मेरी बात मानते हो ?"

सुव्रत बोला, "हमसे बड़ा कोई दूसरे की बात सुनता है।"

भारती हंसकर बोली, "भले आदमी, गुस्सा न करो। सोचकर देखो, यह समय क्या मेरे लिए नौकरी छोड़ने का है ? फर्म उन्नति पर है। सुना है, कर्मचारियों का वेतन वगैरह बढ़ेगा। हम लोग अपना हक नहीं छोड़ेंगे, जैसे भी हो, इसे बढ़वाएंगे। इन बातों में एडिथ बहुत हुशियार है। उसे इसका अनुभव है। हम लोग जिस तरह मेहनत कर रहे हैं, उम्मीद है—"कमीशन का रेट भी बढ़वाकर रहेंगे ···"

सुव्रत ने कहा, "तो इसके मायने यह हुए कि तुम नौकरी छोड़ने की बात बिलकुल नहीं सोचती ?"

भारती हंसकर बोली, "नहीं। इतनी साधारण-सी बात को समझने में तुम्हें इतना समय लगा !"

पत्नी की जिद के कारण पराजित सुव्रत भीतर ही भीतर गुलगता रहा। भारती ने जैसे अपने व्यवहार से बतला दिया है कि सुव्रत की इच्छा-अनिच्छा का मूल्य उसकी दृष्टि में कितना नगण्य है—उसके व्यक्तित्व का मूल्य कितना कम है ! सुव्रत ही इस घर का मालिक है। पिता तो नाममात्र के लिए घर के मुखिया हैं। सच बात तो यह है कि उसके पिता इस परिवार-रूपी नाटक के नेपथ्य में हैं। परिवार के रंगमंच पर प्रधान नायक के रूप में सुव्रत मजूमदार ही है। लेकिन यह

सब होने से क्या होगा ? उसकी प्रधानता की उपेक्षा कर, आरती ने अपने लिए एक अलग स्वयंशासित परिवेश का निर्माण किया है। पत्नी की तुलना में सुव्रत अधिक कमाता है। कानून जो कहे, 'इस पुरुपतांत्रिक समाज में वातावरण सुव्रत के ही अनुकूल है। बुद्धि-बल, बाहु-बल में भी वह आगे है। लेकिन ये सभी बेकार हो गए। इस सभ्य समाज में पत्नी पर बाहु-बल का प्रयोग निन्दनीय है। तुम उसे अपनी भुजाओं में बांध सकते हो, बांधकर प्रहार नहीं कर सकते। सुव्रत को अच्छी तरह याद है—गांव वाले घर में पिता के हाथों मां को मार खानी पड़ती थी। उन दोनों के प्रचंड झगड़े के कारण बचपन में कितनी बार नींद टूट-टूट जाती थी—लेकिन आंखें खोलने की हिम्मत नहीं होती थी। मुंहजोर पत्नी का शासन उन्होंने सिर्फ मुंह से ही नहीं किया था—सिर के केशों को हाथों से खींचकर दो-चार मुक्के भी लगा देते थे। मां रोती-रोती घर का दरवाजा खोलकर दालान में चली जाती थी—ऐसे कई दृश्य देखने को मिले थे। उन दिनों अवश्य ही मां के लिए उसके प्राण रोते रहते थे। मन ही मन संसार की ऐसी सारी अबला नारियों का पक्ष उसने लिया था।

लेकिन आज जब उसकी पत्नी उसकी इच्छा के विरुद्ध आचरण कर रही है—वैसी भावना मन में नहीं आती। उस दिन पिता में जिस बर्बर और निर्मम पुरुष के दर्शन किए थे—आज, उन्हींका खून उसकी नस-नस में दौड़ रहा है ! बहुत ही मुश्किल से अपने को संयत कर पा रहा है सुव्रत।

और इस संयम को, इस शालीनता को, सुव्रत के पिता कायरता और कमजोरी समझते हैं ! पौरुष की कमी मानते हैं ! बीच-बीच में नारी-चरित्र के सम्बन्ध में उनके मन्तव्य सुनने को मिलते हैं—'गृहीतार्थं न मुंचति नारी बर्बर कच्छपाः।' साथ ही इस प्रवचन की व्याख्या भी

कर देते हैं—'स्त्री बर्बर और कछुए की तरह एक बार जो पकड़ लेती है, वह छोड़ती नहीं।' औरत की जाति ही ऐसी है! किसी प्रकार समझाने से नहीं समझेगी—तर्क के पास नहीं फटकेगी। सिर्फ जिद और ऐंठ ही उसका सम्बल है। इस ऐंठ को तोड़ने के लिए दूसरी दवा चाहिए!

इस दवा को सुव्रत जानता है; लेकिन सभ्य समाज में इसका प्रयोग नहीं किया जा सकता।

पिता अभी भी बीच-बीच में कहते हैं—'बेटे, डंसो या मत डंसो—बीच-बीच में फुफकार मारते रहना जरूरी है! इसीलिए तो लोग साप से डरते हैं। तभी तो स्त्री को पता लगेगा—हां, इस घर में कोई मर्द है!"

२०

उस दिन एक और मामूली बात को लेकर तूफान उठ खड़ा हुआ। अब सुव्रत बिना फुफकार मारे नहीं रह सका।

आफिस जाने के समय आरती थोड़ा साज-शृंगार कर बाहर निकलना पसन्द करती है। आफिस ही क्यों, घर से दो कदम बाहर निकलने पर भी औरतों को थोड़ा सजना होता है। घर के भीतर वे जैसे-तैसे रह लेती हैं; लेकिन बाहर जाने के समय, जिसकी जितनी औकात है, उसीके अनुसार साज-शृंगार करना नहीं भूलती। सुव्रत यह बात जानता है। वह

इतना अरसिक नहीं है कि इसके लिए वह कोई एतराज करेगा। किसी आत्मीय या दोस्त के यहां या सिनेमा जाते समय सुव्रत पांच-सात मिनट में तैयार हो जाता है। इसके बाद बन्द दरवाजे के पास खड़ा वह आरती की प्रतीक्षा करता है। बीच-बीच में पूछता है, "क्यों, हो गया ?"

अन्त में आरती बाहर निकलती है। पति की ओर देखकर पूछती है, "क्यों, बहुत देर हो गई ?"

सुव्रत ने हंसकर उत्तर दिया है, "नहीं, वैसी कोई खास नहीं—सिर्फ पैंतालिस मिनट ! लेकिन हां, खूब सुन्दर लगती हो ! मानना पड़ेगा, तुमने समय का अच्छा उपयोग किया है। अभी तक सिर्फ सेकेंड और मिनट गिनता रहा था, लेकिन अब पलक-भर के लिए आंखें हटाने की इच्छा नहीं होती।"

आरती लजाकर कहती, "आ-हा-हा···"

सुव्रत बोला, "आ-हा-हा नहीं, सोच रहा हूं—तुम्हारे साथ बाहर निकलूंगा कैसे ?'

आरती ने पूछा, "क्यों ?"

सुव्रत ने जवाब दिया, "तुम्हारी जो सज-धज है और हमारा जो वेष है, इसे देखकर लोग मुझे तुम्हारा नोकर छोड़कर और क्या सोचेंगे ?"

आरती बोली, "आ-हा···तुम भी थोड़े सज सकते थे। मैंने क्या तुम्हें मना किया है ?"

मना कौन करेगा ? लेकिन अपने सजने के बजाय दूसरे को सजाना सुव्रत को अधिक प्रिय है। कलकत्ता में जब से रहने लगा है, कभी खुशहाली की हालत में नहीं रहा। लेकिन इसी फटेहाली के बीच वह पत्नी के लिए कीमती साड़ियां लाता रहा है। छोटे-मोटे उपहार पाकर आरती का चेहरा खिल उठता था। साबुन, स्नो, पाउडर—ऐसी चीजें लाने का भार सुव्रत पर ही था। लेकिन नौकरी के बाद आरती ने यह सारा उलट-

पुलट दिया है। अब वह अपनी साड़ी या ब्लाउज या प्रसाधन की सामग्री—अपनी पसन्द से खरीदने लगी है। इसमें और किसीकी पसन्द का ध्यान भी है, कौन जाने। लेकिन सुव्रत को पसन्द नहीं। गहरे रंग सुव्रत को नहीं भाते—और भारती को ऐसे ही रंग अधिक भाते हैं!

२१

उस दिन भारती आफिस जाने के लिए तैयारी कर रही थी। सुव्रत बरामदे में एक कुर्सी पर बैठा अखबार पढ़ रहा था। हठात् ननद-भौजाई के झगड़े की आवाज सुनाई पड़ी।

भारती ने पूछा, "अरी नीली, तुमने मेरा बैग खोला था?'

नीला बोली, "नहीं भाभी···"

भारती के गले की आवाज सुनाई पड़ी, " 'नहीं भाभी' कहने से मैं मान जाऊंगी! तुमने बैग खोला है, इसका मुझे पता चल गया है—क्योंकि इसमें से एक चीज गायब है।"

नीला ने कहा, "मैं कुछ नहीं जानती भाभी—सच कह रही हूं।"

भारती बोली, "तुम्हारा सच बोलना निकालती हूं," कहकर भारती नीला की ओर बढ़ी। इसके बाद ननद-भौजाई की भाग-दौड़, इस कमरे से उस कमरे तक! भारती जैसे नीला की हम-उम्र हो! मानो वह भी चौदह साल की लड़की हो!

सरोजिनीदेवी बोलीं, "क्या हुआ, बहू ? अब क्या तुम्हारे आफिस जाने का समय नहीं है ? अरी ओ नीला—फेंक दे—फेंक दे ! कौन बड़ी चीज ले ली है—फेंक दे, बेटी···"

अन्त में वह चीज मिली। नीला की मुट्ठी के भीतर से वह चीज निकली। मणि नहीं, मुक्ता नहीं—प्लास्टिक की छोटी-सी चीज—उसके भीतर लाल रंग का जमा कोई पदार्थ।

सुव्रत अखबार फेंककर घटना-स्थल पर जा खड़ा हुआ, "क्या है यह ?"

नीला अब तक हांफ रही थी। इस बार हंसकर बोली, "लिपस्टिक।"

सुव्रत ने बहन के हाथ से उसे छीन लिया और लेकर अपने कमरे में चला आया। आरती भी पीछे-पीछे आई। पति की ओर लजाते हुए देखा और बोली, "इसे लेकर तुम क्या करोगे, दो मुझे।"

सुव्रत ने कहा, "यदि नहीं दूं···?"

आरती बोली, "क्या बचपना करते हो ? इसे लेकर तुम क्या करोगे ?"

देने के पहले सुव्रत ने पत्नी की ओर गहरी दृष्टि से देखा। एक पल चुप रहा। इसके बाद उसके होंठों पर एक जहरीली मुस्कान उतर आई, "लो ! इसके बाद सिगरेट पीना कब शुरू कर रही हो ?"

आरती ने लिपस्टिक को खिड़की के बाहर फेंक दिया। सुव्रत ने देखा, बहुत दिनों बाद आरती की दोनों आंखें छलछला आई हैं···

किन्तु आज सान्त्वना का एक शब्द भी सुव्रत ने नहीं कहा—न मनावन किया, थोड़ा भी नहीं पसीजा, बल्कि अपनी निष्ठुरता का उपभोग किया। मन ही मन सोचा—आज, इतने दिनों बाद थोड़ा बदला लिया है !

कुछ ही समय बाद आरती आफिस के लिए रवाना हो गई।

तेल लगाकर सुव्रत भी बाथरूम में घुसा। वहां उसे सुनाई पड़ा—

नीला मां से कह रही थी, "भाभी ने उसे पैसे से तो नहीं खरीदा था, मां ! एडिय ने उसे 'प्रेजेण्ट' दिया था। तुम तो 'प्रेजेण्ट-प्रेजेण्ट' समझती नहीं—'प्रेजेण्ट' माने उपहार ! प्यार मे उपहार दिया था।"

२२

पत्नी की स्वेच्छाचारिता की चर्चा सुव्रत ने अपने सास-श्वसुर से की। पहले इसके सम्बन्ध मे कुछ नहीं कहा था। बतलाने से अपना ही सम्मान घटता, पौरुष की हसाई होती। लड़की को उसके पति के हाथो सौंप सास-श्वसुर का उत्तरदायित्व समाप्त हो गया। अब सारा दायित्व उस-पर है क्योकि पत्नी का अभिभावक तो उसका पति होता है। पत्नी यदि पति की बात नही माने या उसका अभिभावकत्व स्वीकार नही करे, तब इसकी फरियाद किससे करे ? यह तो उसीके लिए लज्जा की बात है और कौन पति इस तरह के अपमान सहना पसन्द करेगा ? आजकल करते-करते इसीलिए उसने अपने श्वसुर को यह बात नही बतलाई।

लेकिन उस दिन जब अलीपुर बार लाइब्रेरी से उसके श्वसुर ने फोन किया और अपनी बेटी के स्वास्थ्य के बारे मे पूछा—तब सुव्रत ने धीरे-धीरे सारी बातें बता दी। आरती का शरीर अच्छा कैसे रह सकता है ? सारे दिन इस तरह दौड़-धूप करने से शरीर कही ठीक रह सकता

है, विशेषकर बंगाली लड़की का शरीर ?

निवारण बाबू ने पूछा, "इस तरह दौड़-धूप करने ही क्यों देते हो ?"

सुव्रत बोला, "वह क्या किसीकी बात सुनती है !"

निवारण बाबू ने पूछा, "आरती क्या अब भी नौकरी करती है—अब तक उसने नौकरी नहीं छोड़ी ?"

सुव्रत बोला, "कौन उससे नौकरी छुड़वा सकता है ? हमेशा तो अपने मन की करती रही है !"

निवारण बाबू बोले, "यह तो बिलकुल गलत है, बिलकुल गलत ! सबकी सुख-सुविधा का ध्यान रखना होता है। सिर्फ अपनी मनमानी करने से कैसे चलेगा ? उस दिन तुम्हारे बाबूजी इधर आए थे। कैसी-कैसी बातें वह कह गए ! शायद बच्चे तक की चिन्ता नहीं करती ! छि:-छि: ! इसे ही कहते हैं—सोना फेंककर आंचल में कांच बांध लेना ! तुम एक काम करो। उसे लेकर अगले रविवार को हमारे घर आओ। रात का खाना वहीं खाना। तब उसी समय इस सम्बन्ध में बातचीत कर लूंगा।"

२३

आजकल पत्नी को लेकर बाहर शायद ही निकलता है सुव्रत। मन में पहले जैसी उमंग नहीं। इसके अलावा रोज ही दोनों अपने-अपने

काम के कारण काफी रात गए घर लौटते हैं।

बैंक का काम समाप्त कर सुव्रत पार्ट-टाइम करने जाता है। भारती मशीन-बिक्री या डिमांस्ट्रेशन के बहाने पता नहीं कहां-कहां जाती है, क्या करती रहती है!

छुट्टी के दिन भी पत्नी को लेकर बाहर नहीं निकलता सुव्रत। वह मन नहीं, वह मिजाज नहीं। आरती भी इस छुट्टी के दिन विशेष रूप से पुत्र-वत्सला हो उठती है। पिण्टू को नहलाती-खिलाती है, उसके साथ खेलती है। सुव्रत को लगता है, यह सब उससे दूर रहने का बहाना-भर है। सुव्रत भी किसीकी उपेक्षा सहने का आदी नहीं। वह भी अपने दोस्तों की खोज में निकल पड़ता है। ताश खेलते हुए अड्डा जमाता है और रात ग्यारह बजे के पहले घर नहीं लौटता।

२४

उसके पिता ने बुलाया है, यह जानने पर आरती ने कोई हीला-हवाला नहीं किया। सचमुच उन लोगों से मिले बहुत दिन हो गए—जबकि उसका नैहर 'चेतला' बहुत दूर नहीं है।

बस में भी आरती पिण्टू को लेकर खोई रही। बच्चे के कौतूहल-भरे प्रश्नों के उत्तर देती रही। 'पिण्टू के पिता' नामक जीव उसके पास बैठा है, जैसे आरती को इसकी खबर नहीं।

ससुराल में सुव्रत की अच्छी आव-भगत हुई। निवारण बाबू बाहर मुवक्किलों से बातचीत कर रहे थे। कुछ समय बाद उनके चले जाने पर स्वयं भीतर आ गए। सुव्रत ने इतने समय में साले-सालियों के बीच अड्डा जमा लिया। पत्नी के साथ उसका विरोध चल रहा है, उसके मन में हमेशा अशान्ति बनी रहती है—यह मानो वह भूल गया।

'ब्रिज' के खेल में जबर्दस्ती अमला-कमला ने सुव्रत को समेट लिया। बहुत कहने पर भी आरती इसमें सम्मिलित नहीं हुई। माता-पिता के साथ उसकी जरूरी बातचीत हो रही है। वहां से उत्तेजित स्वर में कहे गए तर्क-वितर्क की भी भनक मिली। लेकिन सुव्रत ने कान लगाकर उसे सुनना नहीं चाहा, मानो इन बातों से उसका कोई लेना-देना नहीं!

अमला और कमला दोनों थर्ड इयर की छात्राएं हैं। कुछ साल पहले सुव्रत को देखते ही वे भाग खड़ी होती थीं। अब उसका साथ छोड़ना नहीं चाहतीं। उस समय उनके मुंह से बोल नहीं फूटते थे—अब दोनों बातूनी हो गई हैं।

अमला ने पूछा, "क्या बात है, जीजाजी? दीदी से आजकल आपका झगड़ा चल रहा है?"

सुव्रत बोला, "किस बात का झगड़ा?"

कमला बोली, "झगड़ा होने से भी आप क्या उसे स्वीकार करेंगे! लेकिन आपका साहस भी कम नहीं···"

सुव्रत ने कहा, "मुझे डरपोक होते कभी देखा है?"

अमला बोली, "वही तो कहें! लेकिन आप कान खोलकर सुन लीजिए—हम सब दीदी की तरफ हैं। आप इस समय बिलकुल विरोधी कैंप में हैं। यदि हम एकसाथ मिलकर आपपर आक्रमण करें, आपको भागने का रास्ता भी नहीं मिलेगा···"

सुव्रत बोला, "भागूंगा क्यों?"

अमला बोली, "तब क्या खड़े-खड़े मार खाएंगे?"

सुव्रत बोला, "वही खाएंगे। तुम लोगों के वाक्यबाण तो पुष्पबाण की तरह हैं..."

कमला ने पूछा, "और दीदी के बाण...?"

सुव्रत बोला, "वे तो अग्निबाण हैं!"

"ठहरिए, हम लोग अभी दीदी से जाकर कहती हैं..."

२५

खाने-पीने के बाद निवारण बाबू और उनकी पत्नी सुरबाला दोनों ने ही सुव्रत के सामने आरती को झिड़का, साथ ही सीख भी दी।

निवारण बाबू बोले, "तुम्हें लेकर हम लोगों का सिर झुक गया बेटी! उस दिन प्रियगोपाल बाबू आकर कितना कुछ कह गए! जब भी भेंट हो, तब केवल तुम्हारी निन्दा सुनना क्या अच्छा लगता है?"

सुरबाला बोली, "उन सब बातों को सुनाने की जरूरत नहीं। तुम नौकरी छोड़ दो, बेटी! झमेला ही खत्म। परिवार की शान्ति के लिए ही तो सब कुछ है। यदि परिवार में शान्ति नहीं रही, तब रुपये-पैसे कमाकर क्या होगा?"

आरती चुपचाप मां-बाप की झिड़कियां सुनती रही। जो कुछ प्रतिवाद करना था, पहले ही कह दिया है। इस समय उन बातों को उसने

नहीं दोहराया, वरन् इस बातचीत को दूसरा ही मोड़ दिया—छोटे भाई गोलोक का स्वास्थ्य ठीक क्यों नहीं रहता ? मां को जो पेचिश का रोग है, उसका ठीक इलाज क्यों नहीं करवाती ?

सुरबाला बोलीं, "मेरी तुम चिन्ता मत करो, बेटी ! तुम लोगों की शान्ति में ही मेरी शान्ति है। मन में अगर शान्ति नहीं हो तब देह क्या ठीक रह सकती है ? हम लोगों ने अभी जो कुछ कहा है—वह तुम्हारे कानों तक पहुंचा या नहीं ?"

आरती बोली, "पहुंचेगा क्यों नहीं, मां ? ये बातें कोई नई तो हैं नहीं, रोज ही सुनती रहती हूं। चिन्ता मत करो। तुम सबों की जो राय है, हम उसीके अनुसार काम करेंगे। तुम लोगों में से किसीकी भी शान्ति भंग करना नहीं चाहती।"

सुरबाला बोलीं, 'भगवान तुम्हें सुबुद्धि दे। रुपये-पैसे ही दुनिया में सबसे बड़ी चीज नहीं है बेटी ! पति-पुत्र का सुख ही औरत के जीवन का सच्चा सुख है। इसे ही लेकर तो नारी का जीवन है। तुम आजकल की लड़कियां इन बातों को नहीं मानतीं। लेकिन इसका फल कोई अच्छा हुआ है, या इससे घर-गृहस्थी में सुख-शान्ति बढ़ गई है—यह तो देखने में नहीं आता।"

सड़क के मोड़ तक निवारण बाबू बेटी-दामाद को छोड़ने आए। अमल-कमला भी आईं। पिण्टू सो गया था। निवारण बाबू उसे गोद में उठाकर लाए थे।

"बस में जाने पर परेशानी होगी—एक टैक्सी ले लो।"

टैक्सी को रोककर उसमें बेटी-दामाद को बिठा दिया। निवारण बाबू ने हिसाब लगाकर ड्राइवर के हाथ में अग्रिम भाड़ा भी दे दिया।

२६

टैक्सी में कदाचित् ही चढ़ता है सुव्रत । अपने पैसे खर्च करके तो चढ़ता ही नहीं । ऐसी विलासिता का अवसर नहीं मिलता । घर-गृहस्थी के अनेक दायित्व हैं । हर पैसे को सोच-समझकर खर्च करना पड़ता है ।

बहुत दिनों बाद पत्नी को लेकर टैक्सी में बैठा था सुव्रत । बस की भीड़ नहीं, जगह की कमी नहीं । सुव्रत थोड़ा अच्छा महसूस करने लगा था । बाहर की हवा में शीतलता है । ससुराल के आदर-सत्कार से परितृप्त सुव्रत ने इस बार श्वसुर-कन्या को सन्धि का संकेत दिया ।

लेकिन भारती इसके लिए तैयार नहीं है । ऐसी शानदार सवारी का सुख उसे स्पर्श कहीं कर सका । अब तक मन के भीतर जो ज्वालामुखी धधक रहा था—एकाएक भारती उसे उगलने लगी ।

"शिकायत और केवल शिकायत ! मेरी शिकायत किए बिना तुम शायद एक गिलास पानी भी नहीं पिओगे ! लगता है, तुमने यह कसम खा ली है ।"

सुव्रत ने कहा, "मैंने कहां शिकायत की है !"

भारती बोली, "सामने नहीं की है, पीठ पीछे की है । मेरे मां-बाप से जाने क्या-क्या तुमने कहा है—तुम्हारे पिता ने कहा है···"

सुव्रत ने प्रतिवाद किया, "देखो, मेरे पिता के बारे में कुछ मत कहो ।"

भारती बोली, "क्यों नहीं कहूंगी ? वे भी क्या कम हैं ? तुम सब लोग एक ही तरह के हो । पिता के घर दो पल शान्ति से रह सकूं, तुम लोगों को यह भी मंजूर नहीं । अच्छी बात है । तुम लोग जो चाहते हो, वही होगा । छोड़ दूंगी नौकरी ।"

सुव्रत पत्नी को समझाने के स्वर में बोला, "देखो, तुम्हारी भलाई के लिए ही सब कह रहे हैं—तुम्हारे शरीर के लिए—स्वास्थ्य के लिए..."

आरती बोली, "हुं !...मेरी भलाई को लेकर तुम लोगों को इतना सिर-दर्द है। असल बात है—तुम लोग अपनी जिद मनवाना चाहते हो। अच्छी बात है, यही करूंगी। तुम खुद इस्तीफा टाइप कर लेते आना। मैं तुम्हारे सामने दस्तखत कर दूंगी।"

सुव्रत बोला, "अच्छा..."

मन ही मन उसने सोचा—चलो, गुस्से से ही सही ! सुव्रत यह अवसर नहीं छोड़ेगा।

पहले-पहल आरती को थोड़ी तकलीफ होगी। किन्तु आपरेशन टेबल पर रोगी के कष्ट की बात डाक्टर नहीं सोचता। सुव्रत ने सोचकर देखा है—इसमें द्विविधा, दुर्बलता नहीं दिखानी है। पहले वह किसी-किसी पल में दुर्बल हो उठा था; इसीका परिणाम यह हुआ कि आरती हाथ से बेकाबू हो गई। अब सुव्रत अपने को बदलेगा। जरूरत पड़ने पर उसे कठोर भी होना होगा। भविष्य की शान्ति और परिवार के कल्याण के लिए ऐसी कठोरता कभी-कभी अनिवार्य हो उठती है।

२७

दूसरे दिन काम की भीड़ में भी सुव्रत आरती का इस्तीफा टाइप

करना नही भूला। उसे याद आया—नौकरी के लिए आवेदन-पत्र भी उसीने टाइप किया था। आज एक बड़े अप्रीतिकर पर्व का उपसंहार भी वह स्वयं ही कर रहा है।

२८

शाम के बाद सुव्रत जब घर लौटा तब उसने पाया कि आरती पहले ही आ गई है। पति को देखकर आरती ने पूछा, "ले आए?"

सुव्रत बोला, "हां।"

आरती ने कहा, "देखें।"

सुव्रत ने टाइप किया हुआ कागज बढ़ा दिया।

सरसरी निगाह से उसे देख आरती ने नीचे अपना हस्ताक्षर कर दिया। इसके बाद कागज को मोड़कर उसने अपने बैग में रख लिया।

इस्तीफे के कागज को 'वैनिटी बैग' में रख आरती दूसरे दिन ऑफिस के लिए रवाना हुई। उसने अपने मन को स्थिर कर लिया है। आज वह वही करेगी जो सब लोग चाहते हैं। इसके बाद क्या होगा, वह स्वयं नहीं जानती। परिणाम की बात सोचने की उसे इच्छा नहीं। वह सब सुव्रत ही सोचे। ट्राम में बैठे-बैठे उसके मन में यह बात आई कि कल से इस रास्ते उसका आना-जाना नहीं होगा। दफ्तर निकलने की ही जल्दी नहीं पड़ेगी। घर में वह चुपचाप बैठी रहेगी। इसकी सोचते ही उसके

परिवार की सुख-सुविधा में जो थोड़ी-बहुत वृद्धि की थी, वह जाती रहेगी। किन्तु इसे लेकर उसे नहीं, सुव्रत को सोचना होगा।

और दिनों की तरह ही शान्त-गम्भीर भाव से आरती आफिस में घुसी। हाजिरी-बही में दस्तखत करते समय मन ही मन मुस्कराई। इस हाजिरी-बही में उसका यह आखिरी दस्तखत है।

रमा और मल्लिका दोनों ने ही पूछा, "तुम्हें क्या हुआ है?"

एडिथ ने भी यही प्रश्न किया, "क्या मामला है? अरे, तुम तो पीली पड़ गई हो!"

आरती बोली, "होगा क्या?"

२९

मशीन लेकर महिलाएं एक-एक कर अपने काम पर निकल गई। आरती भी निकलेगी। उसने सोचा—निकलने के पहले वह हिमांशु बाबू को अपने इस्तीफे का संकेत देती जाए। यदि वे बाहर निकल गए तो आरती के लौटने पर उनसे भेंट नहीं हो पाएगी।

हिमांशु बाबू अपने कमरे में अकेले बैठे चेक-बुक पर हस्ताक्षर कर रहे थे। आरती को देखकर उन्होंने सिर उठाया। सोचा था—कोई और है, लेकिन आरती को देखकर उनका चेहरा खिल उठा, "अरे, आप हैं मिसेज मजूमदार—बैठिए, क्या बात है?"

आरती बोली, "आपसे कुछ कहना था···"

"जरूर कहिए।"

इतना आदर हिमांशु बाबू और किसीको नही देते। आरती एक कुर्सी खींचकर बैठ गई।

हिमांशु बाबू हसते हुए बोले, "आपके काम की काफी तारीफ सुनी है। आप जिन-जिन ग्राहकों के यहां जाती हैं—वे सब आपकी तारीफ करते हैं। किसीको कोई शिकायत नही। लेकिन आपकी दूसरी साथिनों के बारे मे मैं ऐसा नही कह सकता।"

टेबल पर फोन की घंटी देर से बज रही थी। हिमांशु बाबू बोले, "ओफ्फो···नाक मे दम कर दिया—" इसके बाद खीझकर उन्होंने रिसीवर उठाया।

"हैलो···किसे चाहते हैं आप? आरती मजूमदार? वो तो मेरे सामने ही बैठी हुई है—दे रहा हू।"

इसके बाद आरती की ओर फोन बढ़ाकर हिमांशु बाबू बोले, "आपका फोन है मिसेज मजूमदार···"

आरती ने विस्मित होकर सोचा—इस समय कौन उसे फोन करेगा? कांपते हाथो से ही रिसीवर को उसने पकड़ा। एक अज्ञात आशंका से छाती धड़कने लगी।

कोई अपरिचित नही—खूब ही पहचाना हुआ स्वर है। सुब्रत ने ही फोन किया है।

"आरती?"

"हां··"

"तुमने क्या इस्तीफे वाला कागज दे दिया है?"

"नही, अभी तक नही दिया है।"

"तब उसे मत दो।"

परिवार की सुख-सुविधा में जो थोड़ी-बहुत वृद्धि की थी, वह जाती रहेगी। किन्तु इसे लेकर उसे नहीं, सुव्रत को सोचना होगा।

और दिनों की तरह ही शान्त-गम्भीर भाव से आरती आफिस में घुसी। हाजिरी-बही में दस्तखत करते समय मन ही मन मुस्कराई। इस हाजिरी-बही में उसका यह आखिरी दस्तखत है।

रमा और मल्लिका दोनों ने ही पूछा, "तुम्हें क्या हुआ है ?"

एडिथ ने भी यही प्रश्न किया, "क्या मामला है ? अरे, तुम तो पीली पड़ गई हो !"

आरती बोली, "होगा क्या ?"

२९

मशीन लेकर महिलाएं एक-एक कर अपने काम पर निकल गईं। आरती भी निकलेगी। उसने सोचा—निकलने के पहले वह हिमांशु बाबू को अपने इस्तीफे का संकेत देती जाए। यदि वे बाहर निकल गए तो आरती के लौटने पर उनसे भेंट नहीं हो पाएगी।

हिमांशु बाबू अपने कमरे में अकेले बैठे चेक-बुक पर हस्ताक्षर कर रहे थे। आरती को देखकर उन्होंने सिर उठाया। सोचा था—कोई और है, लेकिन आरती को देखकर उनका चेहरा खिल उठा, "अरे, आप हैं मिसेज मजूमदार—बैठिए, क्या बात है ?"

आरती बोली, "आपसे कुछ कहना था···"

"जरूर कहिए।" -

इतना आदर हिमांशु बाबू और किसीको नही देते। आरती एक कुर्सी खींचकर बैठ गई।

हिमांशु बाबू हसते हुए बोले, "आपके काम की काफी तारीफ सुनी है। आप जिन-जिन ग्राहकों के यहा जाती हैं—वे सब आपकी तारीफ करते हैं। किसीको कोई शिकायत नही। लेकिन आपकी दूसरी साथिनों के बारे में मैं ऐसा नही कह सकता।"

टेबल पर फोन की घंटी देर से बज रही थी। हिमांशु बाबू बोले, "फोनने···नाक मे दम कर दिया—" इसके बाद खीभकर उन्होंने रिसीवर उठाया।

"हैलो···किसे चाहते हैं आप ? आरती मजूमदार ? वो तो मेरे सामने ही बैठी हुई है—दे रहा हू।"

इसके बाद आरती की ओर फोन बढाकर हिमांशु बाबू बोले, "आपका फोन है मिसेज मजूमदार···"

आरती ने विस्मित होकर सोचा—इस समय कौन उसे फोन करेगा ? कांपते हाथो से ही रिसीवर को उसने पकडा। एक अज्ञात आशंका से छाती धडकने लगी।

कोई अपरिचित नही—खूब ही पहचाना हुआ स्वर है। सुव्रत ने ही फोन किया है।

"आरती ?"

"हां···"

"तुमने क्या इस्तीफे वाला कागज दे दिया है ?"

"नही, अभी तक नही दिया है।"

"तब उसे मत दो।"

परिवार की सुख-सुविधा में जो थोड़ी-बहुत वृद्धि की थी, वह जाती रहेगी। किन्तु इसे लेकर उसे नहीं, सुब्रत को सोचना होगा।

और दिनों की तरह ही शान्त-गम्भीर भाव से आरती आफिस में घुसी। हाजिरी-बही में दस्तखत करते समय मन ही मन मुस्कराई। इस हाजिरी-बही में उसका यह आखिरी दस्तखत है।

रमा और मल्लिका दोनों ने ही पूछा, "तुम्हें क्या हुआ है?"

एडिथ ने भी यही प्रश्न किया, "क्या मामला है? अरे, तुम तो पीली पड़ गई हो!"

आरती बोली, "होगा क्या?"

२९

मशीन लेकर महिलाएं एक-एक कर अपने काम पर निकल गईं। आरती भी निकलेगी। उसने सोचा—निकलने के पहले वह हिमांशु बाबू को अपने इस्तीफे का संकेत देती जाए। यदि वे बाहर निकल गए तो आरती के लौटने पर उनसे भेंट नहीं हो पाएगी।

हिमांशु बाबू अपने कमरे में अकेले बैठे चेक-बुक पर हस्ताक्षर कर रहे थे। आरती को देखकर उन्होंने सिर उठाया। सोचा था—कोई और है, लेकिन आरती को देखकर उनका चेहरा खिल उठा, "अरे, आप हैं मिसेज मजूमदार—बैठिए, क्या बात है?"

आरती बोली, "आपसे कुछ कहना था···"

"जरूर कहिए।"

इतना आदर हिमांशु बाबू और किसीको नही देते। आरती एक कुर्सी खींचकर बैठ गई।

हिमांशु बाबू हंसते हुए बोले, "आपके काम की काफी तारीफ सुनी है। आप जिन-जिन ग्राहकों के यहा जाती हैं—वे सब आपकी तारीफ करते हैं। किसीको कोई शिकायत नही। लेकिन आपकी दूसरी साथिनों के बारे मे मैं ऐसा नही कह सकता।"

टेबल पर फोन की घंटी देर से बज रही थी। हिमांशु बाबू बोले, "ओफ्फो···नाक मे दम कर दिया—" इसके बाद खीझकर उन्होंने रिसीवर उठाया।

"हैलो···किसे चाहते है आप? आरती मजूमदार? वो तो मेरे सामने ही बैठी हुई है—दे रहा हू।"

इसके बाद आरती की ओर फोन बढ़ाकर हिमांशु बाबू बोले, "आपका फोन है मिसेज मजूमदार···"

आरती ने विस्मित होकर सोचा—इस समय कौन उसे फोन करेगा? कापते हाथो से ही रिसीवर को उसने पकडा। एक अज्ञात आशंका से छाती धडकने लगी।

कोई अपरिचित नही—खूब ही पहचाना हुआ स्वर है। सुव्रत ने ही फोन किया है।

"आरती?"

"हां···"

"तुमने क्या इस्तीफे वाला कागज दे दिया है?"

"नहीं, अभी तक नही दिया है।"

"तब उसे मत दो।"

आरती थोड़ी चकित रह गई। उसे लगा—शायद सुव्रत के मन में अनुताप हुआ है।

धीमे स्वर में आरती बोली, "दूं या नहीं दूं, यह सोचूंगी। लेकिन तुम इतने घबराए हुए क्यों हो ?"

"घबराने की बात करती हो—किसी तरह मार खाने से बचा हूं।"

"क्यों, क्या हुआ ?"

"यहां आकर देखा कि हम लोगों के बैंक में ताला लटक रहा है। बैंक फेल हो गया है।"

"अरे ! यह कैसे हुआ ?"

"पिछले कई दिनों से कुछ गड़बड़ी चल रही थी। लेकिन इस तरह की बातें तो पहले भी सुनने में आती थीं। हम लोगों ने तो यही सुना था कि बैंक बहुत अच्छी हालत में है। लेकिन जो कुछ सुना था, वह गलत था। बैंक के सामने भीड़ लगी हुई है। जिनके पैसे इस बैंक में जमा थे—वे पागलों की तरह टूट पड़े हैं। अभी कुछ नहीं कह सकता। फोन रख रहा हूं। बाद में बात होगी।"

आरती ने रिसीवर रख दिया। उसका चेहरा फक् पड़ गया।

हिमांशु बाबू ने उसके चेहरे की ओर देखते हुए पूछा, "बात क्या है मिसेज मजूमदार, कोई बुरी खबर है क्या ?"

आरती ने स्वीकार किया, "हां, बहुत बुरी खबर है। जयलक्ष्मी बैंक फेल हो गया है। इसी बैंक में मेरे पति काम करते थे।"

"सचमुच यह दुःख की बात है मिसेज मजूमदार ! आखिर जयलक्ष्मी ने ताला बन्द कर दिया ! हम लोग कुछ दिनों से इस तरह की अफवाहें सुन रहे थे कि इस बैंक की भीतरी हालत ठीक नहीं है। मैंने सोचा—मिस्टर मजूमदार को इन बातों का पता होगा।"

आरती असहाय स्वर में बोली, "वे कुछ नहीं जानते थे। कुछ भी

अनुमान नहीं लगा सकते थे। ब्राच ऑफिस में बैठे वे हेड ऑफिस की कोई खोज-खबर नहीं रखते थे। इसी तरह का उनका स्वभाव है। मेरे पिता के भी कुछ रुपये इस बैंक में थे। हम लोगों के कारण ही उन्होंने इसमें एकाउण्ट खोला था।"

हिमांशु बाबू सहानुभूति दिखाते हुए बोले, "क्या करेंगी मिसेज मजूमदार ! आप लोगों को तो कुछ पता नहीं था। ऐसा हो जाएगा—किसने सोचा था ? लड़ाई के समय जब गली-गली में बैंक खुलने लगे—तभी मुझे लगा था—लक्षण अच्छे नहीं हैं ! ये सभी टिक नहीं पाएंगे। हुआ भी यही। सन् '४६-४७ से एक-एक कर अपने कारोबार ये समेटते गए। इन तीन-चार वर्षों में कितने बैंक फेल हो गए ! डिजऑनेस्ट लोग..."

किन्तु उनकी बेईमानी की बात सुनकर क्या करेगी आरती ? जो होना था सो हो गया। अब भविष्य के लिए तैयारी करनी है। कठिन संग्राम सामने है।

उसके सहकर्मियों ने यह खबर सुनकर सहानुभूति दिखलाई, आशा-भरोसा दिया।

एडिथ ने सबसे अधिक ढाढस बंधाया। वह बोली, "बिलकुल मत घबराओ आरती ! इस समय यदि तुम टूट जाओगी तब तुम्हारे पति को कौन देखेगा ? इस समय तो तुम्हीं उनके पास होगी। इस तरह की घटनाएं हमारे साथ कितनी बार हुई हैं। नौकरी खोने के मामले में मेरा पति जॉन कितना एक्सपर्ट है, तुम नहीं जानती !"

एडिथ की बातों से आरती को एक नया बल मिला, नई प्रेरणा मिली। इस ऐंग्लो-इंडियन महिला के साथ आरती का कोई सामाजिक मेल नहीं। वेश-भूषा, रहन-सहन, आचार-व्यवहार में कोई समानता नहीं, किन्तु किसी एक अज्ञात आकर्षण के कारण दोनों के अन्तर का मेल हो गया है

और वे एक-दूसरे के करीब आ गए हैं। इस विपत्ति में इसकी अनुभूति आरती को हुई है। एडिथ के भिन्न समाज, भिन्न आचार-व्यवहार ने अवश्य ही पहले आरती के मन में कौतूहल उत्पन्न किया था। इसके बाद सहानुभूति हुई। और आज जो उनमें अपनापन है—वह पहले के आकर्षण और कौतूहल को बहुत पीछे छोड़ आया है। अब वेश-भूषा और आचार-व्यवहार की भिन्नता आरती को नजर नहीं आती, भिन्न समाज की इस महिला से प्रगाढ़ बन्धुत्व की भावना ही अब आरती के मन में है। आज उसी बन्धुत्व का गंभीर स्पर्श मन को छू गया।

मशीन लेकर आरती एडिथ के साथ निकल पड़ी। व्यक्तिगत काम के लिए वह ऑफिस से कोई सुविधा नहीं चाहती। हिमांशु बाबू आज उसे छुट्टी देना चाहते थे, लेकिन आरती ने छुट्टी नहीं ली।

रास्ते में एडिथ आरती को एक रेस्तरां में ले गई और चाय-टोस्ट खिलाया। आरती की मन:स्थिति चाय पीने की नहीं थी—लेकिन एडिथ के आन्तरिक अनुरोध को वह अस्वीकार नहीं कर सकी। चाय तो बहाना मात्र है। थोड़ी देर तक साथ रहना ही असल उद्देश्य है और इसी बहाने एडिथ उसे ढाढ़स बंधाना चाहती है।

एडिथ के अपने जीवन की विडम्बना भी कम नहीं। गरीबी के साथ उसकी लड़ाई चलती रहती है। शराबी पति को सम्हालना हमेशा उसके लिए संभव नहीं होता। फिर भी अपने दु:ख-दुर्भाग्य की बात भूलकर वह आरती के दु:ख में साथ दे रही है—यह सोचकर आरती का मन कृतज्ञता से भर उठा।

सांझ के बाद भारती ने घर आकर देखा—सुव्रत उससे पहले ही आ गया है। उसके बैंक फेल होने की खबर प्रियगोपाल या सरोजिनीदेवी से छिपी नहीं रही। नीला, नन्तू और सन्तू तक यह खबर जान गए हैं। दरिद्र परिवार में और कोई नई विपत्ति आई है—शायद इसका आभास पिण्टू तक को हो गया है। मा के पास आकर गंभीर मुंह बनाते हुए बोला, "जानती हो मां, बाबूजी की नौकरी छूट गई!"

इस विपत्ति के समय भी भारती को हंसी आ गई। बच्चे के गाल पर चुटकी काटकर बोली, "शरारती कहीं का! नौकरी छूटने की बात तू क्या समझता है?"

उत्तर मे पिण्टू ने मा की गोद में मुंह छिपा लिया। पति से कमरे मे भेंट हुई। चौकी पर पैर लटकाए बैठा था सुव्रत। भारती ने पास जाकर पूछा, "कब आए?"

सुव्रत बोला, "यही कुछ देर पहले।"

भारती बोली, "नीला ने चाय दी है?"

सुव्रत बोला, "हां।"

भारती ने मुस्कराते हुए कहा, "बात क्या है? तुम आज से ही भविष्य की चिन्ता मे डूब गए?"

सुव्रत बोला, "तुम क्या कल वाली सूरत आज देखना चाहती हो? बैंक फेल होने से कितने लोगो के हजारो रुपये डूब गए। कुछ को तो लाख-डेढ लाख का नुकसान हुआ। लेकिन इस समय मुझे उनकी चिन्ता नही हो रही है। मेरी जो डेढ़ सौ रुपये की नौकरी चली गई और यदि कोई दूसरी नौकरी नहीं मिली, तब सबको आधा पेट खाकर रहना होगा। —यही सोच रहा हूं।"

आरती बोली, "भूखे क्यों रहेंगे ? दो-एक महीने में तुम क्या दूसरी नौकरी नहीं कर लोगे ? जो हो, मैं भी तो कुछ कर रही हूं।"

बाहर चप्पलों की आवाज हुई। हाथ में हुक्का लेकर प्रियगोपाल दरवाजे के पास आ खड़े हुए।

आरती ने सिर पर आंचल कर लिया। प्रियगोपाल हुक्के के कश लेकर बोले, "हमने भी सब सुना। सोचो मत बेटे ! सिर्फ अकेले तुम्हारी ही नौकरी तो नहीं गई। न दुःख पंचभि सह। पांच साथ हों तो दुःख नहीं होता है।"

पिता और पुत्र दोनों बीच-बीच में दार्शनिकों के स्वर में बोलना पसंद करते हैं। आरती मुस्कराई। लगता है—पुरुष का स्वरूप ही ऐसा है ! रुपये-पैसे, चावल-दाल, नून-तेल की दुनिया में हमेशा बंधे रहना ये नहीं चाहते। इसके बाहर 'मुक्ति' चाहते हैं। घोर विपत्ति के समय में भी वे तत्त्व कथा कहते हैं—संस्कृत की सूक्तियां दोहराते हैं !

लेकिन आरती तो ऐसा नहीं कर सकती। नौकरी करे चाहे न करे —भात की हंड़िया और नून-तेल की खोज-खबर रखनी पड़ती है। रसोईघर का हिसाब औरत की अंगुलियों पर रहता है। किसी चीज की कमी होने पर सुव्रत को पहले ही कह देती थी—अब तो वैसा वह कर नहीं सकेगी।

३१

महीने भर के भीतर सुव्रत मानो और क्लान्त एवं हताश हो गया। अखबार में विज्ञापन देखकर वह आवेदन-पत्र भेजता; किन्तु इंटरव्यू के लिए शायद ही कोई उसे बुलाता। इंटरव्यू में कभी बुलाए जाने पर भी वह नहीं चुना गया—यह उसका चेहरा देखकर ही समझा जा सकता है।

भारती सुव्रत से अधिक पूछताछ नहीं करती। वह झुंझला उठता। आशा-भरोसा की बात भी उसे बर्दाश्त नहीं होती। ऐसी कोई बात कहने पर सुव्रत मुंह बिचकाकर कहता, 'रहने दो, रहने दो। तुम्हें मेरी पीठ सहलानी नहीं होगी। सभी जानते हैं कि तुम हमारी प्रधान पृष्ठ-पोषक हो!'

३२

और एक दिन भारती आफिस जाने की तैयारी कर रही थी। सुव्रत चौकी पर बैठा बीड़ी पी रहा था और जाने क्या सोच रहा था। ऐसे समय श्रीमान पिण्टू कहीं से हाजिर हो गए। वह सिर से पैर तक भीगा हुआ था।

"मां, मैं नहाया हूं।"

नन्हे-नन्हे दांतों को बाहर निकाल पिण्टू ने आनन्द-भरी मुद्रा में अपने मुक्ति-स्नान की खबर दी।

आरती ने बच्चे को डांटा, "नालायक कहीं का! बुखार हो जाएगा! देखो तो जी, इसने क्या किया है!"

इसके बाद मुस्कराकर अनुरोध-भरे स्वर में बोली, "पता नहीं, वे लोग कहां हैं। तौलिया से इसका सिर पोंछ दो न!"

ध्यान-भंग होने के कारण सुब्रत खीझ उठा, "हां, अब तो मुझे ही यह सब करना होगा! बच्चे को नहलाना, खिलाना, सुलाना अब सब मुझे करना होगा। अब तो मैं ही उसकी 'मां' हूं। बाप की जगह तो तुमने ले ली है!"

आरती को गुस्सा आ गया। वह भी तीखे स्वर में बोल उठी, "रहने दो, रहने दो। तुम्हें कुछ नहीं करना होगा। तुम किसी 'कम्प्लेक्स' के शिकार हो। एक दिन बच्चे का सिर पोंछ देने से क्या कोई मां हो जाता है! मां बनना क्या इतना आसान है?"

३३

सुब्रत की नौकरी छूट जाने के बाद सारा परिवार पुरानी स्थिति में आ गया। आरती अपनी नौकरी के धन से पहले वाला स्टैंडर्ड बनाए रखने में असमर्थ थी।

कुमुद को काफी भारी मन से आरती ने विदाई दी। उसके दोनों हाथ पकड़कर बोली, "बुरा मत मानना कुम्मू ! तुम्हें तो सब पता है। यदि हमारे दिन फिरे, तुम्हें जरूर बुलाऊंगी। उस समय आना जरूर।"

कुमुद आंखों में पानी भरकर बोली, "जरूर आऊंगी, बहूजी ! यहां मैं बहुत सुख से थी—रानी की तरह रहती थी।"

दूध में कटौती हुई। पिण्टू के लिए एक पाव और उसके दादा के लिए एक पाव। प्रियगोपाल ने कहा था, "दरकार नहीं है। मेरे लिए दूध लेने की जरूरत नहीं है।"

उनकी देखादेखी पिण्टू भी बोलने लगा, "दरकार नहीं है। मेरे लिए भी दूध मत लो।"

चाय में भी कटौती हुई। धोबी या लाण्ड्री को कपड़े देने बन्द हो गए। अब अपने ही हाथों सब काम किया जाने लगा।

लेकिन नीला अपनी भाभी को कपड़े धोने नहीं देती थी। जब भी आरती मैले कपड़ों का अंबार लेकर साबुन मलने बैठती, नीला उसे जबर्दस्ती उठा देती, "तुम जाओ। तुम बाहर भी काम करोगी, घर में भी खटोगी—तब शरीर का क्या होगा? बीमार पड़ जाओगी, तब क्या होगा?"

आरती बोली, "और चारा क्या है? घर में और हैं कौन ! हमी लोगों को सब मिलकर करना है।"

"कैसे कहती हो कि घर में आदमी नहीं हैं? तुम्हारी बड़ी नौकरानी है, छोटी नौकरानी है।"

नीला का मुह हाथों में भरकर उसके सुन्दर गोरे मुह को देखती हुई आरती बोली, "तुम मेरी नौकरानी हो? तुम तो मेरी ठकुराइन हो…"

साबुन भीगे हाथों से ही बाथरूम में नीला अपनी भाभी से लिपट

गई।

आरती हंसकर बोली, "छोड़ पगली! गुदगुदी लग रही है—छोड़..."

इस तरह दुर्दिन के दिनों को भी ननद-भाभी मानो हंसकर झेलने के लिए तैयार हैं...

३४

नन्तू और सन्तू भी नासमझ नहीं हैं। दोनों अपनी भाभी के आज्ञाकारी देवर हैं। कुछ दिन पहले तक बिना मछली के वे खाना नहीं खाते थे—थाली में यदि मछली का टुकड़ा न हो तो वे भात नहीं छूते थे। इसके लिए वे पहले कितना हाय-तोबा मचाते थे, लेकिन अब निरामिष भोजन भी चल जाता है। अब कोई भात छोड़कर नहीं उठता। मां के पास जाकर गुस्से में फरियाद नहीं करते।

एक की उम्र बारह साल की है; दूसरे की दस। वे भी घर का काम काम नहीं करते। एक राशन की 'क्यू' में लगता है तो दूसरा कोयला तोड़ता है, पानी भरकर ले आता है। आरती कहती, "यह सब करते रहोगे, तब पढ़ोगे कब? जाओ, पढ़ने बैठो।"

इस तरह का पारिवारिक स्नेह हमेशा बना रहता, ऐसी बात नहीं। बीच-बीच में, दरिद्रता, अभाव के तार झनझना उठते हैं। किस बात को लेकर कब किससे झगड़ा हो जाएगा, ठीक नहीं। सास के साथ बहू

की झड़प हो जाती है—जिन ननदों के साथ इतना दुलार है, उनमें भी कहा-सुनी हो जाती है। झगड़ा शुरू होने पर खतम होने का लक्षण दिखलाई नहीं पड़ता। बड़ी पुरानी-पुरानी बातें उठाई जाती हैं। एक-दूसरे के दोषों को गिन-गिनकर सुनाने का सिलसिला शुरू हो जाता है। शब्दों के बाण से एक-दूसरे को घायल करने से भी वे नहीं चूकते।

घरवालों ने गौर किया है—ठीक ऐसे ही समय वृद्ध श्वसुर चुपचाप कहीं खिसक जाते हैं। मैला कुरता शरीर में डाल, दो-चार आने पैसे हुए तो उन्हें ही सम्बल बना, बिना पैसे के भी वे बाहर निकल जाते हैं। कहां जाते हैं, किस-किस कोने में जाकर अपने को छिपाते हैं, कोई नहीं जानता।

किसी-किसी दिन कोई अद्‌भुत काम कर बैठते हैं। एक दिन शरीर पर एक नई चादर लपेटे आ गए। साधारण मूली चादर। रुपये तो उनके पास थे नहीं, फिर खरीदी कैसे ?

सुव्रत ने पूछा, "बाबूजी, चादर कहां मिली आपको ? किससे खरीदी ?"

"खरीदी नहीं है बेटे···पैसे कहां हैं जो खरीदूंगा ?"

"तब किसने दी है यह चादर ?"

प्रियगोपाल बोले, "हम लोगों के कुण्डूपाड़ा के हरिदास कुण्डू ने यह चादर दी है। कुण्डू की याद है ? मेरा बहुत ही पुराना शिष्य है ! अरे भाई, मैंने पहले मास्टरी-वास्टरी भी की थी। जिन्दगी में कई तरह के धन्धे मैंने किए हैं। उसी हरिदास कुण्डू की दुकान पर जा बैठा था। पैरों की धूल लेकर उसने प्रणाम किया। कितनी भक्ति, श्रद्धा करता है यह हरिदुस ! चाय-नाश्ता मंगाया। फिर बात ही बात में मैंने पूछा, 'तुम्हारी दुकान में चादर वगैरह भी क्या बिकती है ? आजकल के पुराने ढंग का चलन नहीं है, लेकिन हम लोग तो पुराने समय के आदमी हैं।

इसलिए कन्धा खाली-खाली लगता है !' हरिदास बोला, 'चादर क्यों नहीं रहेगी मास्टर साहब ? कालेजों के पुराने अध्यापक तो इसका खूब इस्तेमाल करते हैं। दूं आपको एक ?' मैंने कहा, 'दोगे तो भाई, लेकिन दाम आज मैं नहीं दे पाऊंगा।' हरिदास जीभ काटकर बोला, 'छि:-छि: ! दाम की बात क्यों सोचते हैं ? दाम नहीं लूंगा। चादर मैं आपको 'प्रणामी' के रूप में दे रहा हूं।'—तो देखा ! आजकल ऐसे छात्र कहां मिलते हैं ?"

सुव्रत ने गंभीर मुद्रा में कहा, "छि: बाबूजी, आप उससे यह मामूली चादर मांगकर ले आए ! यह तो एक तरह की भिखमंगी है, अपना मान-सम्मान आपने नहीं सोचा ?"

बेटे से झिड़की सुनकर प्रियगोपाल ने पुत्रवधू की शरण ली, "तुम्हीं कहो बहू, इसमें भिखमंगी कहां है ? कोई यदि आदर से, भक्ति-श्रद्धा से कुछ दे, तब क्या उसे छोड़ देना चाहिए ?"

आरती ने श्वसुर की बात का कोई उत्तर न देकर कहा, "आप दूसरों से कोई चीज मत लीजिए बाबूजी ! आपको जिस चीज की जरूरत हो, हमसे कहिए। मैं आपको ला दूंगी।"

किन्तु इस कथोपकथन के बावजूद प्रियगोपाल जाने कहां से एक-दिन उपहारस्वरूप एक छाता ले आए ! किन्तु सबसे बहुमूल्य उपहार मिला—नकली दांतों का सेट ! बिना एक पैसा खर्च किए जाने किससे बनवा लिए।

लड़का इससे नाराज होता है, यह सोचकर उसके सामने नकली दांत नहीं लगाते। सुव्रत के बाहर चले जाने पर नये नकली दांत लगाकर वे आईने के सामने जा खड़े होते हैं।

पिण्टू कहता, "दादाजी के नये दांत जन्मे हैं।"

आरती हल्के मुस्कराती है। नीला भी छिपकर कम नहीं हंसती।

सरोजिनीदेवी गुस्से से कहतीं, "हां, दूध के दांत जन्मे हैं!"

प्रियगोपाल हंसकर कहते, "दूध के दांत क्यों होंगे? यह कहो—'दन्तरुचि कौमुदी'!"

सरोजिनीदेवी मुंह फेरकर बड़बड़ातीं, "छिः, बाल-बच्चों के सामने लाज-शरम भी नहीं लगती!"

३५

बुढ़ापे में प्रियगोपाल को खाने का लोभ भी बढ़ गया है। घर में सुयोग-सुविधा न पाकर वे बीच-बीच में बाहर निकल पड़ते हैं। निमंत्रण पाने की तो बात ही अलग है, बिना निमंत्रण के भी चले जाते हैं। दूर रिश्तेदार, पुराने परिचित लोगों का पता लगाकर वे उनकी खोज-खबर लेने के बहाने पहुंच जाते हैं। जो उन्हें खाने के लिए नहीं पूछते—लौटकर उनकी शिकायत करते हैं। जो खिलाते-पिलाते हैं, उनकी प्रियगोपाल काफी तारीफ करते हैं, प्रशंसा करते नहीं अघाते।

यह सब देखकर सुव्रत पिता को झिड़कता है और चटोरपन के लिए पिता को भला-बुरा कहता है।

आरती कहती, "ओ हो, इस तरह क्यों बोल रहे हो? तुम्हारे पिता हैं न! बूढ़े आदमी हैं। अपने मन के मुताबिक रहना चाहते हैं, रहने दो न।"

सुव्रत कहता, "सिर्फ मन के मुताबिक रहने की बात नहीं है आरती ! मान-मर्यादा का भी प्रश्न है। मेरे पिता हैं, इसीलिए मुझे इतना दुःख होता है—यदि कोई और होते…" कहकर चुप रह जाता है वह। इसके बाद वह मानो अपना उत्तर अपने में ही ढूंढ़ता। मन ही मन सोचता—हम जो चाहते हैं, वह क्या हमेशा हो पाता है ? उम्र बढ़ने के साथ ही हम इसे अभिज्ञता, समझदारी, अनासक्ति, निर्लिप्तता—और जाने-जाने क्या-क्या समझते हैं ! इसीलिए तो बढ़ती उम्र की हम श्रद्धा करते हैं। किन्तु क्या सभी उम्र के साथ अपने को 'एडजस्ट' कर पाते हैं ? नहीं कर पाते। वृद्ध होना भी मनुष्य को सीखना है। बिना शिक्षा, बिना चेष्टा के सिर के केश पक सकते हैं, दांत झर जाते हैं, मनुष्य जराग्रस्त हो जाता है लेकिन वह प्रवीण नहीं भी हो सकता। संभव है, यह हमारा ही दोष है, वह ही पिता को इस रूप में रख नहीं सका।

पति की निराशा, उसकी कुंठा को दूर करने के लिए आरती को तब दूसरी भूमिका निभानी पड़ती है। वह तो अपने प्रयत्न कर ही रहा है, दायित्व-पालन के लिए सदैव सचेष्ट है।

लेकिन फिर भी एक तरह की रुक्षता, निराशा की परत आरती के मन पर जमती गई है। परिवार में लड़ाई-झगड़े, अभाव-अभियोग तो लगे ही रहते हैं। इसके साथ ही मानो दुनिया ने भी अपना रूप बदलना शुरू कर दिया है। आरती के सामने ही कलकत्ता का स्वरूप धीरे-धीरे बदलता गया है। उसे याद आती है, विवाह के बाद जब वह सास-श्वसुर के पास पति के गांव में थी, उस समय कलकत्ता नगरी परियों की कोई राज-नगरी जैसी लगती थी। इस महानगर की विचित्रता का अन्त नहीं था। यह मानो कोई अलौकिक रहस्य से भरी पुरी हो। इसी अलौकिक पुरी से सुव्रत पत्र भेजता। हर पत्र में भविष्य की कल्पनाओं का जाल बुना रहता। अब और अधिक दिनों तक आरती को विरह-वेदना

नहीं सहनी होगी। बस, थोड़ी-सी सुविधा होते ही सुव्रत कलकत्ता में एक किराये का घर ले लेगा, इसी घर में भारती को ले आएगा।

अपने पत्रों में जिस शहरी जीवन का उल्लासमय चित्र सुव्रत खींचा करता था, कलकत्ता आने पर वह दिखाई नहीं पड़ा। भारती के अकेले आने की बात थी, लेकिन बंगाल के बंटवारे के बाद सारा परिवार ही आ धमका। जिस सुख-स्वच्छन्दता की कल्पना भारती ने की, परिवार के आ जाने से वह धराशायी हो गई। यह सुख का उपभोग नहीं, सभी मानो दुःख के भागीदार बना दिए गए! मूसलाधार वर्षा में एक छाते के भीतर तीन व्यक्तियों के होने पर जैसी दशा होती है, वैसी ही अवस्था हो गई। एक छोटे छाते के नीचे सभी धूप सहने लगे, पानी में भीगने लगे।

इसके बाद भारती ने नौकरी कर ली। खुली साँस लेने का थोड़ा सुख मिला। रूपमयी, रहस्यमयी कलकत्ता नगरी ने मानो प्रसन्नता की दृष्टि से उसे देखा। भारती ने सोचा था—उसकी यह दृष्टि सर्वदा बनी रहेगी। अपने और पति की कमाई के रुपयों से वह धीरे-धीरे एक अच्छे मुहल्ले में घर लेगी; अच्छी तरह रह सकेगी। पिण्टू को भी एक अच्छे स्कूल में भर्ती कर देगी, अच्छी तरह पढ़ाएगी-लिखाएगी; वही तो उन लोगों का भविष्य है!

लेकिन चार दिन बीतते न बीतते महानगर की वह प्रसन्न दृष्टि बदल गई। यह बदली हुई दृष्टि भयानक थी। फिर वही 'पुनर्मूषिको भव' वाली बात। सुव्रत की नौकरी उसके किसी दोष के कारण नहीं गई। किन अदृश्य हाथों की कारगुजारी ने बैंक के दरवाजे बन्द कर दिए, वह नहीं जानती। इसके बाद पिछले छः महीनों से अथक प्रयत्न करने पर भी सुव्रत किसी प्रकार की नौकरी पाने में असमर्थ रहा है। जहाँ जाता है—'नो वैकेन्सी'। काम नहीं है। सुव्रत काम करने के लिए बेचैन

है, लेकिन काम लेने को कोई उत्सुक नहीं। महानगर की सड़कों पर भटकता रहा है सुव्रत। इतने सारे रास्ते—इतना बड़ा राजपथ—लेकिन सभी मानो उसके लिए अन्धी गली है !

एक दिन रास्ते में ही पति से आरती की भेंट हो गई।

डलहौसी स्क्वायर के किसी आफिस से निराश होकर वह लौट रहा था। धर्मतल्ला मोड़ के पास भेंट हो गई। आरती किसी पार्टी के यहां मशीन डिमांस्ट्रेशन के सिलसिले में बालीगंज जा रही थी।

आरती बोली, "अजी, ओ···"

सुव्रत बोला, "अरे तुम···!"

आरती ने कहा, "चलो, चाय पी लें।"

अब तक ऐसे ऑफर सुव्रत ने ही दिए हैं। आज आरती ही ऑफर कर रही है !

सुव्रत बोला, "आज तुम सरकार हो, मैं बेकार हूं। लेकिन मेरी जेब तो बिल्कुल रेगिस्तान है !"

आरती मुस्कराई, "आज मिसेज मजूमदार चाय पिलाएगी। मिस्टर मजूमदार को इसके लिए कोई चिन्ता नहीं करनी है।"

पर्दा ढंके केबिन में चाय पीते समय जो वार्तालाप हुआ, वह पहले की तरह रोमांटिक बिलकुल नहीं था।

सुव्रत की नौकरी के विषय में अब आरती पूछताछ नहीं करती। पूछते डर लगता है। इससे सुव्रत का 'मूड' बिगड़ जाता है। यदि कोई वैसी बात होगी, सुव्रत स्वयं बता देगा। व्यर्थ ही में उसकी असहिष्णुता बढ़ाने से कोई लाभ नहीं।

आरती वह रास्ता नहीं अपनाती। पति को अपने अनुभव सुनाती। वह कहती, "सिर्फ नाम से ही कोई बड़ा आदमी नहीं हो जाता।"

सुव्रत बोला, "क्यों, क्या हुआ ?"

भारती बोली, "उस दिन मशीन लेकर बैरिस्टर एच० एन० हाल्दार की कोठी पर गई थी। रासबिहारी एवेन्यू की तरफ उनका मकान है। काफी अच्छी हालत है। दो गाड़ियां हैं। ड्राइंगरूम बहुत बढ़िया ढंग से सजा हुआ है। कीमती कार्पेट हैं, मूल्यवान सोफासेट हैं—बहुत बड़ा रेडियो सेट है…"

सुव्रत ने हंसकर कहा, "देखकर तुम्हारा जी ललचा गया शायद। सोचा होगा—बैरिस्टर की पत्नी होती तो जीवन धन्य हो जाता!"

भारती बोली, "हुंह…यह तो बाहरी साज-साज वाली बात हुई। भीतर की बात भी सुनो…"

सुव्रत ने पूछा, "क्यों, खाने-पीने के मामले में क्या वे बहुत कंजूस हैं?"

भारती बोली, "नहीं, खाने-पीने की बात नहीं। भीतरी बात क्या रही है। मिस्टर हाल्दार की बेटी का नाम है, शुचि। पूरा नाम है, शुचिस्मिता। नाम तो खूब बढ़िया है। कॉलेज के सेकेंड इयर में पढ़ती है। इनके यहां हम लोगों की एक मशीन की बिक्री हुई है। उस मशीन का इस्तेमाल सिखलाने के सिलसिले में वहां गई थी। मुझे वहां पहुंचने में थोड़ी देर हो गई—अधिक नहीं, पन्द्रह-एक मिनट। बीच में ट्राम-बस के कारण कितनी देर हो जाती है, तुम्हें तो पता है ही। लेकिन जो अपनी कार से आते-जाते हैं, उन्हें तो इस तरह का कष्ट नहीं झेलना पड़ता। उन्हें इन बातों की खबर कैसे रहेगी?"

सुव्रत बोला, "हां, यह तो है। फिर क्या हुआ?"

भारती बोली, "इसके बाद और क्या! लड़की सजी-धजी बैठी थी। मुझे देखकर गुस्से में लाल—'आप इतनी देर से आईं।' मैंने कहा, 'ट्राम की वजह से देर हो गई, बीच में कुछ गड़बड़ी हो गई थी।' पता नहीं, मेरी बात का उसे विश्वास हुआ या नहीं! मुंह बनाकर बोली,

'ट्राम बन्द हो गया था तो बस से आतीं, टैक्सी कर लेतीं—न होता, भाड़ा मैं ही दे देती !' मैंने कहा, 'देखिए, भाड़ा आदि की बात तो नहीं थी।' इसपर लड़की बोली, 'बहस मत कीजिए। मेरा एक जरूरी 'एप्वाइंटमेंट' था, मुझे छोड़ना पड़ा।' मैंने कहा, 'आइए, मैं आपको जल्दी से थोड़ा बता दूं।' लेकिन वह लड़की बोली, 'नहीं, आज नहीं सीखूंगी। आपने चौपट 'मूड' मेरा कर दिया। आज आप जा सकती हैं।' "

सुव्रत चुप सुनता रहा।

आरती कहती गई, "भले-बुरे की पहचान घर या गाड़ी देखकर नहीं की जा सकती। आदमी के व्यवहार से ही सब पता लगता है। तो उसके व्यवहार की बात तुमने भी सुनी। सिर्फ बेटी की नहीं, उसकी मां के व्यवहार में एक तरह का तिरस्कार-भावना छिपी थी। हम लोग खद कमाकर खाते हैं, मशीन कन्धे पर लेकर घूमते हैं—जैसे हम आदमी नहीं हुए, रास्ते के भिखारी हुए !"

सुव्रत हंसकर बोला, "बहुत नाराज लगती हो ?"

आरती बोली, "तुम हंस रहे हो ! इन दिनों मैं अपना मन ठीक नहीं रख पाती। मैं भी ऐसे लोगों को मुंह-तोड़ जवाब देने लगी हूं।"

सुव्रत बोला, "खबरदार, ऐसा काम मत करना। लड़ाई-झगड़ा जो कुछ करना हो, मेरे साथ करो। यह गिरह बांध लो कि सभी झगड़ों के मूल में दाम्पत्य-कलह है।"

आरती बोली, "तुम क्या बकने लगते हो ! उनके मुंह पर तो सभी बातें नहीं कह सकती, चुप रह जाना पड़ता है। लेकिन भीतर से मन सुलग-सुलग उठता है। मुझे क्या हो गया है, खुद नहीं मालूम। जहां कुछ ऐसी बात होती है—मैं उसका मुंहतोड़ जवाब देना चाहती हूं। नहीं देने पर मन दिन भर सुलगता रहता है।"

लेकिन शुचिस्मिता सिर्फ अकेली नहीं है। आरती का 'मूड' खराब

करने के लिए शहर में लोगों की कमी नहीं है। उत्तर-दक्खिन, पूरब-पच्छिम—सभी तरफ के लोगों ने मानो दल बांध लिए हैं।

ऐसी दो-चार और घटनाओं की चर्चा करती है आरती।

पाथुरिया घाट के लोहा व्यवसायी रममय प्रामाणिक के घर में भी एक मशीन खरीदी गई है। उसके लड़के की बहू कमला को मशीन का व्यवहार सिखलाने गई थी आरती। वहां जाने पर कमला ने काफी आदर-सत्कार किया। चाय पिलाई, जलपान कराया। परिवार के विषय में बातचीत की। लेकिन मशीन का व्यवहार किस तरह करना चाहिए, जब तीन-चार दिनों के लगातार परिश्रम के बाद भी वह नहीं सीख सकी, तब आरती ने थोड़ी खीझ के साथ कहा, "ओह, क्या कर रही हैं, आप! आपके पास क्या बुद्धि का अभाव है?"

यह कहती हुई आरती हंस पड़ी थी।

लेकिन कमला नहीं हंसी। गुस्से में उसका चेहरा लाल हो उठा। बोली, "आप जा सकती हैं। आज मैं अब नहीं सीखूंगी।"

लेकिन बात यहीं समाप्त नहीं हुई। कमला की सास वहां मौजूद थी। उन्होंने उत्तर दिया था, "हम लोगों के पास बुद्धि थोड़ी कम है तो इसमें कोई हरज नहीं। जितना है, हमारे लिए काफी है।"

इसके बाद हंसकर उन्होंने कहा था, "हम लोगों को तो मरदों की तरह बाहर नहीं घूमना पड़ता। हम लोग घर में ही रहती हैं। गृहस्थ की बहू-बेटियों की बुद्धि थोड़ी कम रहे, यही अच्छा है।"

आरती अवाक् रह गई थी। कमला उस दिन बुनाई सीखने नहीं बैठी। कमला के पति निरंजन बाबू ने इस घटना की रिपोर्ट भी आरती के दफ्तर में कर दी। हिमांशु बाबू ने यह बात बताई थी।

उन्होंने हंसते-हंसते ही कहा था, "देखिए तो मिसेज मजूमदार, लोग आपके विरुद्ध भी रिपोर्ट करते हैं!"

यह सब सुनकर सुव्रत ने आरती को चेतावनी दी, "इस तरह की रिपोर्ट आना अच्छा नहीं। जरा सोच-समझकर चलो। हम लोगों के जैसे दुर्दिन हैं..."

पुरुष की गुरुता मानने वाले सुव्रत के मुंह से आरती को पहली बार ऐसी बात सुनने को मिली। उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

३६

एक दिन आफिस के काम के बाद एडिथ आरती को अपने घर ले गई। रिपन स्ट्रीट के दो-तल्ले मकान में दो कमरे लेकर वह रहती है। उसकी दशा अच्छी नहीं है, किन्तु दो छोटे कमरों को भी अच्छी तरह सजाकर उसने रखा है। बैठने के कमरे में ईसा-मसीह के सलीब पर चढ़ने की तस्वीर है। जाने क्यों इस तरह के चित्रों के प्रति आरती का विशेष आकर्षण है।

आरती बोली, "बहुत सुन्दर तस्वीर है! एक इसी तरह की तस्वीर मुझे दोगी एडिथ?"

एडिथ खुश होकर बोली, "अच्छी बात है। मैं तुम्हारे लिए एक ऐसी तस्वीर ला दूंगी।"

चाय पर बहुत तरह की बातें हुईं दोनों में। एडिथ का पति तब तक नहीं लौटा था। बातों के सिलसिले में एडिथ ने बतलाया—बहुत ही गैर-

जिम्मेदार किस्म का आदमी है जान। एडिथ के बहुत सारे पैसे उसने शराब और जुए में खर्च कर दिए है। लेकिन एडिथ उसे छोड तो नहीं सकती। तलाक तो कभी भी हो सकता है। उनमें इस तरह की व्यवस्था है। लेकिन एडिथ ऐसा करना नही चाहती। छोड देने पर तो वह और भी बिगड जाएगा। वह उसे सुधारना चाहती है। बहुत दिनों का सगी है वह। हां, विवाह के पहले से ही परिचय था, विवाह के पहले से ही दोनों में प्यार था।

आरती मुस्कराई, "मैंने भी कुछ इसी तरह का अनुमान लगाया था। अपने उन दिनो की बातें सुनाओ, एडिथ—सब खोलकर सुनाना होगा!"

आरती को भारी कौतूहल था। प्रेम-विवाह की कहानी मानो वह पहली बार सुन रही हो। एक हृदय दूसरे को प्यार करता है, यह कहानी शायद कभी पुरानी नहीं होती, इसका रहस्य मानो कभी समाप्त नहीं होता।

लेकिन एडिथ ने बात को हंसी में टालते हुए कहा, "आज नही, और कभी। और किसी दिन सुनाऊंगी तुम्हें!"

लौटने समय एडिथ आरती को सरकुलर रोड तक पहुंचा गई। बातचीत में आफिस की चर्चा भी हुई। मिस्टर मुखर्जी का स्वभाव इन दिनों ज्यादा चिड़चिड़ा हो गया है।

आरती बोली, "लगता है, उनका कारोबार आजकल ठीक नहीं चल रहा। लेकिन इसमें हम क्या कर सकती है? इसमे हम लोगों का दोष क्या है? हम तो पहले की ही तरह मेहनत कर रही हैं।"

एडिथ बोली, "दोष न होने पर भी, सब दोष हम लोगों के सिर पर ही थोपे जाएंगे। शायद बिजनेस का यही नियम है!"

३७

घर लौटकर आरती ने एडिथ के विषय में सुव्रत से चर्चा की। उनकी घर-गृहस्थी के बारे में, उसके प्रेम-विवाह के विषय में—पति को लेकर उसकी चिन्ता। सबके बारे में।

लेकिन सुव्रत एडिथ के साथ आरती के मेलजोल से खुश नहीं हो सका। वह बोला, "तुम उसके घर, उसके मुहल्ले की तरफ गई ही क्यों थीं? उससे इतना मेलजोल अच्छा नहीं।"

आरती बोली, "नहीं जी, तुम जो समझ रहे हो, वैसी बात नहीं। एडिथ बहुत अच्छी लड़की है। जिस तरह अच्छे-बुरे लोग हमारे बीच हैं, ठीक उनके बीच भी वैसे हैं।"

सुव्रत गंभीर होकर बोला, "हां, यह तो ठीक है। लेकिन उनका आचार-व्यवहार दूसरी तरह का है—खास कर, शाम के बाद उन सब मुहल्लों में तुम्हारा जाना ठीक नहीं।"

आरती चुप लगा गई।

एडिथ पर सुव्रत की नाराजगी काफी दिनों से है। सबसे अधिक नाराज वह लिपस्टिक की घटना को लेकर हुआ था। आरती को हंसी आ गई। आरती ने उस घटना के बाद लिपस्टिक का इस्तेमाल कभी नहीं किया। सुव्रत की शायद धारणा है कि एडिथ उसे इस तरह बिगाड़ रही है!

इन दिनों आफिस से लौटने पर आरती का चेहरा उतरा-उतरा लगता। हिमांशु बाबू छोटी-मोटी बातों को लेकर दोष निकालते हैं। उनकी बातचीत से रूखापन झलकता है। आरती को यह सब अच्छा नहीं लगता। किन्तु जिस तरह घर के झगड़ों की बात आफिस में नहीं कही जाती, उसी तरह आफिस की ऐसी बातों को घर में कहने से कोई लाभ

नहीं।

लेकिन सुव्रत आजकल बहुत कुछ गौर कर रहा है। बीच-बीच में पूछता है, 'तुम्हारी तबीयत तो ठीक है, आरती ?"

आरती मुस्कराने का प्रयास करती, "तबीयत ठीक क्यों नहीं रहेगी ? तुमने मुझे कब अस्वस्थ पाया है ?"

सुव्रत ने पूछा, "तब क्या मन खराब है ?"

आरती कहती, "मन ? मन की बात सोचने की फुर्सत ही कहां है ?"

सुव्रत फिर भी नहीं छोड़ता, "सच-सच बताओ, हिमांशु बाबू के साथ तुम्हारी पट रही है न ?"

आरती किंचित् मुस्कराई, "बहुत ज्यादा पटने से क्या तुम्हें खुशी होगी ?"

सुव्रत ने भौंहें सिकोड़कर कहा, "खुशी क्यों होगी ! लेकिन, इस समय, हमारे जैसे दुर्दिन हैं, तुम्हें थोड़ा 'टैक्टफुल' रहना चाहिए। तुम्हारे काम को लेकर क्या वे मीन-मेख निकालते हैं ?"

"मुझे वे क्या कह सकते हैं !"

३८

लेकिन एक दिन फिर पति के सम्मुख आरती पकड़ी गई। उस दिन अपना आक्रोश, उत्तेजना वह चेहरे पर से हटा नहीं पाई थी।

३७

घर लौटकर आरती ने एडिथ के विषय में सुव्रत से चर्चा की। उसकी घर-गृहस्थी के बारे में, उसके प्रेम-विवाह के विषय में—पति को लेकर उसकी चिन्ता। सबके बारे में।

लेकिन सुव्रत एडिथ के साथ आरती के मेलजोल से खुश नहीं हो सका। वह बोला, "तुम उसके घर, उसके मुहल्ले की तरफ गईं ही क्यों थीं? उससे इतना मेलजोल अच्छा नहीं।"

आरती बोली, "नहीं जी, तुम जो समझ रहे हो, वैसी बात नहीं। एडिथ बहुत अच्छी लड़की है। जिस तरह अच्छे-बुरे लोग हमारे बीच हैं, ठीक उनके बीच भी वैसे हैं।"

सुव्रत गंभीर होकर बोला, "हां, यह तो ठीक है। लेकिन उनका आचार-व्यवहार दूसरी तरह का है—खास कर, शाम के बाद उन सब मुहल्लों में तुम्हारा जाना ठीक नहीं।"

आरती चुप लगा गई।

एडिथ पर सुव्रत की नाराजगी काफी दिनों से है। सबसे अधिक नाराज वह लिपस्टिक की घटना को लेकर हुआ था। आरती को हंसी आ गई। आरती ने उस घटना के बाद लिपस्टिक का इस्तेमाल कभी नहीं किया। सुव्रत की शायद धारणा है कि एडिथ उसे इस तरह बिगाड़ रही है!

इन दिनों आफिस से लौटने पर आरती का चेहरा उतरा-उतरा लगता। हिमांशु बाबू छोटी-मोटी बातों को लेकर दोष निकालते हैं। उनकी बातचीत से रूखापन झलकता है। आरती को यह सब अच्छा नहीं लगता। किन्तु जिस तरह घर के झगड़ों की बात आफिस में नहीं कही जाती, उसी तरह आफिस की ऐसी बातों को घर में कहने से कोई लाभ

नहीं।

लेकिन सुव्रत आजकल बहुत कुछ गौर कर रहा है। बीच-बीच में पूछता है, "तुम्हारी तबीयत तो ठीक है, भारती ?"

भारती मुस्कराने का प्रयास करती, "तबीयत ठीक क्यों नहीं रहेगी ? तुमने मुझे कब अस्वस्थ पाया है ?"

सुव्रत ने पूछा, "तब क्या मन खराब है ?"

भारती कहती, "मन ? मन की बात सोचने की फुर्सत ही कहां है ?"

सुव्रत फिर भी नहीं छोड़ता, "सच-सच बताओ, हिमांशु बाबू के साथ तुम्हारी पट रही है न ?"

भारती किंचित् मुस्कराई, "बहुत ज्यादा पटने से क्या तुम्हें खुशी होगी ?"

सुव्रत ने भौंहें सिकोड़कर कहा, "खुशी क्यों होगी ! लेकिन, इस समय, हमारे जैसे दुर्दिन है, तुम्हें थोड़ा 'टैक्टफुल' रहना चाहिए। तुम्हारे काम को लेकर क्या वे मीन-मेख निकालते हैं ?"

"मुझे वे क्या कह सकते हैं !"

३८

लेकिन एक दिन फिर पति के सम्मुख भारती पकड़ी गई। उस दिन अपना आक्रोश, उत्तेजना वह चेहरे पर से हटा नहीं पाई थी।

सुव्रत बोला, "क्या बात है ? आज फिर तुम लोगों के बीच कुछ हुआ ?"

आरती मुस्कराने की चेष्टा करती हुई बोली, "कोई खास नहीं। कमीशन को लेकर हिमांशु बाबू के साथ थोड़ी झड़प हो गई।"

सुव्रत बोला, "साफ-साफ कहो···।"

आरती बोली, "मेरे साथ नहीं, एडिथ के साथ झड़प हुई। मिस्टर मुखर्जी ने कहा था––एक महीने में यदि हम तीन मशीनों की बिक्री करेंगे, तब पांच प्रतिशत की बजाय दस प्रतिशत कमीशन मिलेगा। इस महीने में एडिथ ने चार मशीनों की बिक्री की, मैंने तीन। लेकिन अब मिस्टर मुखर्जी अपनी बात से मुकर रहे हैं। कह रहे हैं—बाजार बहुत मन्दा जा रहा है। इधर आफिस का खर्च भी बहुत बढ़ गया है—ऐसे समय आप लोग यदि ऐसी मांग करेंगी···"

सुव्रत ने कहा, "ठीक ही तो कहा।"

आरती चकित स्वर में बोली, "तुम कह क्या रहे हो—उन्होंने ठीक कहा ?"

सुव्रत बोला, "जाने भी दो। अर्द्ध त्यजति पंडिताः। ऊपरी बाद में, पहले अपना मूल बचाकर रखो ! जैसा समय आ गया है—! तुम्हें तो मालूम है, दो बैंकों में नौकरी का चान्स मिलते-मिलते रह गया। बुरे दिन हैं। सोच रहा हूं, पचास रुपये का वह दूसरा पार्ट-टाइम काम भी ले लूं। बैठे रहने का कोई मतलब नहीं। सुनो, तुम्हारे साथ उनका कोई 'हिच' तो नहीं हुआ ?"

आरती पति को भरोसा दिलाती बोली, "अरे नहीं, मैंने तो कुछ नहीं कहा। जो कुछ झड़प हुई है, एडिथ के साथ हुई है। यह जरूर है कि मुझे बिलकुल अच्छा नहीं लगा।"

सुव्रत बोला, "हां, भला अच्छा किसको लगेगा ? लेकिन समय देख-

कर चलना होता है। कुछ और सब्र करो। मुझे कोई नौकरी मिल जाए—फिर सब देख लेंगे। अभी तो कुछ दिन सब्र से ही काम लेना होगा।"

३९

भारती तो सब्र करना चाहती ही थी; किन्तु क्या कर पाई?

किसी कम्पनी की नौकरी के लिए इंटरव्यू देने सुव्रत आसनसोल गया था। लौटकर बोला, "सब मुलम्मा था वह विज्ञापन। उन लोगों ने पहले ही ने आदमी चुन रखा था।···लेकिन बात क्या है? तुम आज इतनी जल्दी कैसे आ गई? अभी तो तीन भी नहीं बजे हैं। आज बहुत जल्दी तुम्हें छुट्टी मिल गई?"

भारती ने पति की ओर देखे बिना कहा, "हूं···"

भारती का चेहरा काफी उतरा हुआ और उदास था। ऐसा लगता था—उसके भीतर कोई द्वंद्व है। आंखों में उसीकी छाया है।

सुव्रत ने पूछा, "क्या हुआ, बताओ न?"

"बाद में कहूंगी।"

"बाद में क्यों, अभी बतलाओ।"

अपने कमरे में भारती को ले जाकर सुव्रत ने कहा, "हां, अब बताओ।"

आरती फुसफुसाहट के स्वर में बोली, "धीरे बोलो। मांजी या बाबूजी को नहीं बताया है। मैंने नौकरी छोड़ दी है।"

सुव्रत आरती की बात सुनकर स्तब्ध रह गया। कुछ क्षणों बाद पूछा, "नौकरी छोड़ दी! क्यों?"

आरती बोली, "मान-सम्मान लेकर वहां अब नौकरी नहीं की जा सकती।"

इस बार सुव्रत का चेहरा कठोर हो गया। पूछा, "हिमांशु बाबू ने तुमसे कोई अपमानजनक बात की है? उसे सबक सिखाना पड़ेगा। उसने समझ क्या रखा है?"

आरती अपने पति की आंखों की ओर देख मुस्कराई, "नहीं, वैसी कोई बात नहीं।"

सुव्रत ने अपने को संयत करते हुए पूछा, "तब फिर क्या हुआ?"

आरती बोली, "हिमांशु बाबू ने एडिथ का अपमान किया है।"

"ओह, एडिथ का! इससे तुम्हें क्या? क्या कहा है उन्होंने एडिथ को?"

आरती ने संक्षेप में सब कह सुनाया।

कमीशन की बात को लेकर एडिथ के साथ झड़प वाली घटना के बाद हिमांशु बाबू आफिस में 'रेगुलारिटी' को लेकर और अधिक कड़ाई करने लगे। किसी ग्राहक के यहां के लौटने में थोड़ी देर होने पर वे कैफियत तलब करते और किसीके ऊपर नहीं, एडिथ पर उनका गुस्सा अधिक था। थोड़ी देर से आने पर पूछते, "कहां अड्डा जमाकर बैठ गई थीं?"

आरती ने कभी कोई बात नहीं की। जो कुछ उत्तर देना होता, एडिथ ही देती।

लेकिन कल एडिथ नहीं थी। अपनी बीमारी की सूचना उसने पहले

ही फोन से दे दी थी; एक आवेदन-पत्र भी भेज दिया था। इधर रिपन स्ट्रीट में एक मद्रासी क्रिश्चियन के घर मशीन का डिमांस्ट्रेशन जरूरी भी। हिमांशु बाबू एडिथ को नहीं देखकर आगबबूला हो उठे।

"मिसेज कहां है?"

भारती बोली, "वह नहीं आई है। बीमार है। आफिस के दरबान के हाथ आवेदन-पत्र भेजा है।"

भारती आवेदन-पत्र देने गई थी।

हिमांशु बाबू झुंझला उठे, "आवेदन-पत्र लेकर हम क्या करेंगे? बीमारी! हूं···बहानेबाजी! जानबूझकर मुझे परेशान करने के लिए ही आज गैरहाजिर हो गई। वह जानती थी—आज यदि नहीं आएगी तो हमारा नुकसान होगा—इसीलिए।"

भारती ने शान्त स्वर में कहा था, "शायद यह बात नहीं है। दरबान उसे बिछावन पर लेटे देख आया है।"

हिमांशु बाबू एक क्षण रुके, फिर बोले, "बिछावन पर लेटे नहीं रहेगी तो क्या करेगी! कल रविवार था। ऊपरी आमदनी के लोभ में 'गेस्टों' को 'इण्टरटेन' कर आज वह बिछावन पर से कैसे उठ पाएगी?"

कमरे में रमा और मल्लिका भी थी। लज्जा से उनका मुंह लाल हो उठा और उन्होंने सिर झुका लिया। दो किरानी एक-दूसरे को देखकर मुस्कराए।

हिमांशु बाबू उठकर जा रहे थे; लेकिन भारती तीर की तरह कुर्सी से उठकर आगे बढ़ गई, "आप एडिथ के बारे में ऐसी-वैसी बातें नहीं कह सकते, हिमांशु बाबू!"

हिमांशु बाबू बोले, "सॉरी, आप लोगों के सामने कहना शायद ठीक नहीं था। किन्तु जो कुछ कहा है, ठीक ही कहा है। वह तो वैसी ही है।"

आरती ने तीव्र स्वर में प्रतिवाद किया, "कभी नहीं। एडिथ विवाहिता है, उसका पति है।"

हिमांशु बाबू हंस पड़े थे, "पति तो हर ऐसी लड़की का होता है। आप इन्हें नहीं जानतीं।"

आरती ने वैसे ही तीव्र उद्धत् स्वर में कहा, "मैं अच्छी तरह जानती हूं। एडिथ हमारी साथिन है। इतने दिनों का उसका-हमारा साथ है। आपने बिना जाने-बूझे उसका अपमान किया है। आपने जो कुछ कहा है, उसे आपको वापस लेना होगा।"

हिमांशु बाबू का मुंह क्रोध से लाल हो गया। आरती की ओर तीखी नजर से देख बोले, "हूं···मैंने जो कुछ भी कहा है, उसमें से एक शब्द भी वापस नहीं लूंगा। मैं फिर कह रहा हूं—वह बहुत ही खराब, गिरे हुए चरित्र की औरत है!"

आरती ने उसी तीव्रता से प्रतिवाद किया, "आपने जो कुछ कहा है, उसे वापस लिए बिना कोई भले घर की लड़की आपके यहां काम नहीं कर सकती।"

"अच्छी बात है।" कहकर हिमांशु बाबू अपने चैम्बर में चले गए।

इसके बाद दस मिनट के भीतर इस्तीफे वाला कागज आरती ने चपरासी के हाथ भिजवा दिया था। कोई नया इस्तीफा लिखकर नहीं। सुब्रत द्वारा टाइप किया हुआ, वही मुड़ा-तुड़ा कागज उसके बैग में पड़ा था। इतने दिनों बाद उसी कागज का इस्तेमाल किया।

उत्तेजित अवस्था में सादा कागज ढूंढ़ते वक्त वह टाइप किया हुआ कागज बैग से गिर पड़ा था।

उसका इस्तीफा पाकर हिमांशु बाबू उठकर आए थे, "आप क्या पागल हो गई हैं, मिसेज मजूमदार? कहां की जैसी-तैसी कोई औरत—जाति नहीं मिलती, धर्म नहीं मिलता—उसके लिए आप नौकरी छोड़

देंगी ? आपको तो कुछ नहीं कहा गया है।"

भारती, "आपने हम सबका अपमान किया है।"

हॉल से बाहर निकलते समय एक बार फिर हिमांशु बाबू ने कहा था, "सुनिए, सुनिए···पागलपन मत कीजिए···आपके घर की हालत मैं जानता हूं···।"

भारती ने घूमकर पूछा, "तब आप अपनी बात वापस ले रहे हैं ?"

हिमांशु बाबू हठात् ठिठक गए। गम्भीर और कड़े स्वर में जवाब दिया, "नहीं।"

भारती फिर वहां नहीं रुकी।

४०

घटना छिपी नहीं रही। भुवन ने ही इसे नहीं छिपा रहने दिया। नीला, नन्नू-मन्नू सुनकर स्तब्ध रह गए। एक बहुत बड़ी दुर्घटना हो गई है, इसे समझने किसीको देर नहीं लगी। सिर्फ पिण्टू अपने दोनों छोटे हाथों से तालियां बजाकर कहता फिरा, "मां की नौकरी चली गई! कितने मजे की बात है।"

प्रियगोपाल और सरोजिनीदेवी ने सब कुछ सुना—लेकिन सब समझ नहीं सके। सचमुच—जाने कहां की कौन एक ऐंग्लो-इंडियन स्त्री—वे तो इस तरह की होती ही हैं। काम की गलती को लेकर यदि मालिक

नाराज होकर दो-चार भली-बुरी बातें कह गया, तो क्या हुआ ? किसी ग़लती पर क्या वे अपने नौकर-नौकरानी को नहीं डांटते ? जो गाय दूध देती है, उसकी एकाध लात तो बर्दाश्त ही करनी पड़ती है। नौकरी करते समय मालिक के मन के मुताबिक ही तो काम करना होगा। फिर आरती को तो हिमांशु बाबू ने कुछ नहीं कहा। कहेंगे क्यों ? एक ही जिले के आदमी हैं, जाति के ब्राह्मण हैं—कहा जा सकता है, एक तरह से आत्मीय ही हैं !

प्रियगोपाल तो कोई बात ही नहीं करते। थाली में पड़े आम को जीभ से चाटते रहे। संसार की किसी भी बात में वे अब रुचि नहीं लेते।

सरोजिनीदेवी सिल पर कुछ कूटते हुए मन ही मन बड़बड़ाने लगीं, "और अभी क्या हम लोगों को मिजाज दिखाने का, अभिमान करने का समय है ? इस तरह नौकरी का लेना क्या और छोड़ना क्या—मैं तो कुछ भी समझ नहीं पाती।"

सुव्रत पास ही में चुपचाप बैठा हुआ था। मां की ओर देखकर विचित्र ढंग से मुस्कराया, "सबसे मजेदार बात तो यह है मां कि हिमांशु बाबू ने जिसका सचमुच अपमान किया है, वह शायद सिगरेट फूंकती हुई आफिस में हाजिर हो गई होगी और उसने अपना काम शुरू भी कर दिया होगा ! वह तो हम लोगों की भावुक बंगाली लड़की नहीं है !"

"तुम, तुम भी ऐसा कहते हो ?"

सुव्रत ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया।

ऐसा लगता है, जैसे कोई इस घर में नहीं है। सभी चले गए हैं। सारा घर मानो अन्धकार में डूबा हुआ है। सम्बलहीन, भविष्य की आशंका से मानो सभी गूंगे हो गए हैं !

सुव्रत कब तक चुपचाप बैठा रहा, इसका कोई ठीक नहीं। आरती की बेवकूफी की बात सोचकर वह सचमुच स्तंभित रह गया है। इस

तरह की जिद सर्वनाशी होती है। इस तरह क्या सबको एकाएक असहाय बना देना चाहिए ? आक्रोश और विद्वेष से भीतर ही भीतर बेचैन हो उठा सुव्रत। लेकिन इस तरह चुप बैठे रहना उसके लिए असम्भव है। खूंटी पर से अधमैली कमीज उतारकर पहन ली। सारे बटन लगे या नहीं, इस तरफ ध्यान भी नहीं दिया।

निःशब्द बाहर जा रहा था सुव्रत। हठात् आरती ने कहा, "सुनो···"

सुव्रत मुड़कर बोला, "कहो···"

"तुम क्या बाहर जा रहे हो ?"

"हां।"

आरती कुछ क्षणों तक चुप रहकर बोली, "तब मुझे क्या करने को कहते हो ? मैंने सोचा था—और कोई नहीं, तुम तो जरूर···"

सुव्रत ने देखा—बहुत दिनों बाद आरती की दो बड़ी आंखों से आंसू टपक रहे हैं···।

और ठीक उसी मुहूर्त में मानो आरती उसे वापस मिल गई।

अपने आचरण पर सुव्रत को लज्जा आने लगी। छिः-छिः···

सुव्रत ने दरवाजा बन्द कर दिया। इसके बाद पत्नी के हाथ को अपने हाथों में लेकर वह धीरे से मुस्कराया, "तुमने ठीक ही सोचा था आरती···तुमने ठीक ही किया है।"